कैनेडा से प्रकाशित साहित्यिक पत्रिका

# वसुधा

Year 18, Issue 72
Oct.-Dec., 2021

VASUDHA A CANADIAN PUBLICATION

FOUNDER-EDITOR-PUBLISHER : Dr. SNEH THAKORE
AWARDED BY THE PRESIDENT OF INDIA

## संस्थापक, सम्पादक व प्रकाशक
## डॉ. स्नेह ठाकुर
भारत के राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत

वर्ष १८ - अंक ७२, अक्टूबर - दिसम्बर २०२१

# शहर के लोग

## पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि

आग लगी है
क्षितिज-वनों में
लपटें उठ रही हैं
जैसे चौकड़ी भरते द्वाभा के
द्रुतगामी नीले हरिन
जैसे सुनहरे रंगों की बकरियों के शिशु
छलाँगें भर रहे हैं
अपने आश्रय-स्थल की ओर जाते हुए.

शहर के नीचे
उग रहा है
एक कंकरीट का गुलाब
गतिविहीन डंठल लिए
किसी अध:कोष्ठ की
कर रहा है प्रतीक्षा
चांद्रायण पराग के लिए
और आग की लपटों में साँस लेने को
कंकरीटी गुलाब की पंखुरियों में खोए
अदृश्यप्राय
दौड़ते लोग
सुखों से ऊबते लोग
दु:खों में डूबते लोग
शहर के लोग.

# vsu2a

## sS4apk, sMpadk v p/kaxk : डॉ. Snea #akur

(पोस्ट-डॉक्टरल फ़ेलोशिप अवार्डी)

(भारत के राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रपति भवन में "हिन्दी सेवी सम्मान" से सम्मानित)


| xI8R | rciyta | p*# |
|---|---|---|
| सम्पादकीय | | २ |
| दीपों का त्योहार | डॉ. ऋतु माथुर | ३ |
| गीता – अध्याय ७-९ | अविनाश कुमार | ४ |
| कृष्ण चन्द्र 'नीहार' चकोर | डॉ. अमलदार नीहार | ६ |
| तुलसी के राम | प्रो. त्रिभुवन नाथ शुक्ल | ७ |
| माला जगमगा गई | अजय जैन 'विकल्प' | १५ |
| २१वीं पूण्यतिथि पर सरदार वल्लभ भाई पटेल का स्मरण | पद्मश्री डॉ. रवीन्द्र कुमार | १६ |
| शहीद | व्यास मणि त्रिपाठी | १८ |
| एक आशीर्वाद | दुष्यंत कुमार | २० |
| एप्लीक्स | भावना सक्सैना | २१ |
| साहित्य का लक्ष्य | जैन राजेन्द्र गुलेच्छा 'राज' | २४ |
| हेमिंग्वे साहब कह गए | प्रेरणा बिडालिया | २६ |
| राष्ट्र वाद के क्रांतिकारी पुरोधा एवं महायोगी : अरविन्द घोष | संतोष खन्ना | २८ |
| कोख का बँटवारा | अंकुर सिंह | ३१ |
| क्या मैं पत्थर हो चुका हूँ! | मनीष कुमार गुप्ता | ३२ |
| घर की ऊर्जा | समीर उपाध्याय | ३३ |
| ईंट का गीत | सुशांत सुप्रिय | ३४ |
| बुद्ध | मुन्ना कुमार सिंह | ३६ |
| तेरे नाम | गीतू गर्ग | ३८ |
| राजस्थान की संत परम्परा में जाम्भो जी की शबद वाणी का वैशिष्ट्य | डॉ. हरीश कुमार | ३९ |
| शहर के लोग | डॉ. श्याम सिंह शशि | १अ |
| डॉ. स्नेह ठाकुर का रचना संसार | | ४४ अ |



rcnaAo. meiniht ivcar t4a mNtVy rcnakaro. keinjI ivcar t4a mNtVy hE vsu2a' rcnakaro. keivcaro. keil0 ]%rdayI nhI. hE p/kaxk kI Aa)a ibna ko{ rcna iksI p/kar ]²< nhI. kI janI caih0| p/kaixt rcnaAo. pr ko{ pair&imk nhI. idya ja0ga| rcna0>wej ne keil0 sMpkRpta :

16 Revlis Crescent, Toronto, Ontario M1V-1E9, Canada. TEL. 416-291-9534

vai8R xuk Annual subscription..........$25.00

Dak µara By Mail $35.00, International Mail $40.00

Website: http://www.Vasudha1.webs.com,

E-mail: dr.snehthakore@gmail.com

## sMpad kIy

जहाँ असमंजस तथा किंकर्तव्यविमूढ़ता से कोरोना काल में उसकी विभीषिकाओं से तमाम दुनियाँ गुजर रही थी एवं कई अर्थों में अभी भी गुजर रही है, वहाँ अनेक व्यक्तियों ने अपनी जीवन-शैली को समयानुकूल भी बना लिया है. विश्व की जनता ने, चाहे लॉक-डाउन हो न हो, चाहे सरकारें अब जो भी नियम बनाएँ, पर वैश्विक जनता इस सम्बन्ध में सतर्कता बनाए रख रही है. कैनेडा में तीनों वैक्सीनेशन लगने के बाद भी, सरकार द्वारा मास्क हटा देने के बाद भी, जनता एवं स्वास्थ्य संस्थाएँ तथा अन्य संस्थाएँ भी सतर्कता हेतु अपनी बुद्धि, अपनी तर्क-प्रणाली का प्रयोग कर रहे हैं. और वे उन सभी सतर्कताओं का पालन कर रहे हैं जो उन्हें निराश होने की अपेक्षा इस महामारी से सक्रिय लड़ाई में उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं. कोरोना के इस भीषण काल में जानकारी प्राप्ति की विधा टेलिविज़न, गूगल आदि के साथ-साथ वेबिनार की विधा भी चिन्तनशील व्यक्तियों के लिए बहुत लोकप्रिय व उपयोगी सिद्ध हुई. दूर-दराज़ से, विश्व के कोने-कोने से व्यक्तियों का समूह एक-दूसरे से जुड़ा. फोन के माध्यम से भी व्यक्ति एक-दूसरे से वार्तालाप हेतु जुड़ते हैं, परन्तु वेबिनार में अधिक संख्या में, अधिक समय तक वार्तालाप कर न केवल चिंतनशील वक्ता वरन् चिंतनशील श्रोता भी एक-दूसरे से जुड़ते हैं. श्रोतागण वक्ताओं की बातों पर, उनके दृष्टिकोण पर प्रश्न भी कर सकते हैं. प्रश्नोत्तर सभी के लिए ज्ञान-वर्धक सिद्ध होते हैं.

हम आज जिस कोरोना महामारी के काल के दौर से गुज़र रहे हैं वह कितने व्यक्तियों को इहलोक से अपने साथ परलोक ले गया है, वह संख्या सोचने से भी रूह काँपती है. हाँ! अब इस महामारी का प्रकोप कम अवश्य हुआ है पर अभी भी हम इसके शिकंजे से पूर्णरूपेण स्वतन्त्र नहीं हुए हैं. हाँ! अलबत्ता, इस महामारी ने आज विश्व को एक परिवारिक सोच, "वसुधैव कुटुम्बकम" और "ग्लोबल विलेज" की अद्‌भुत सोच को अवश्यमेव सार्थक करने का अवसर दिया है. हाँ! यह परिस्थितियाँ काश दु:खद न होतीं.

"शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्" यह सूक्ति स्वास्थ्य को सर्वोपरि मानती है. अत: स्वस्थ रहें और दूसरों को भी स्वस्थ रखने के लिए दूरी बनाए रखें. "जीवेम् शरदः शतम".

हम आज जिस कोरोना महामारी काल के दौर से कुछ हद तक गुज़र चुके हैं पर अभी भी कुछ सीमा तक गुजर रहे हैं क्योंकि यह दौर अभी तक चालू है, जो न जाने कितने व्यक्तियों को इहलोक से अपने साथ परलोक ले जा चुका है और अभी भी कितनों को ले जायेगा, कोई नहीं जानता.

अलवत्ता, इस महामारी ने आज विश्व को एक परिवार "वसुधैव कुटुम्बकम्", "ग्लोबल विलेज़" की एक अद्‌भुत सैद्धांतिक सोच से अवश्य जोड़ दिया है.

महामारी के इस काल ने योग एवं आयुर्वेद की सर्वोपरि महत्ता को भी विश्व में प्रतिपादित किया है. जहाँ एक ओर आयुर्वेद की कई जड़ी-बूटियों को काढ़े के रूप में सुबह-शाम पीने से रोग-प्रतिरोधक शक्ति का विकास इस महामारी से लड़ने में समर्थ हुआ, वहीं दूसरी ओर योग की अनेक क्रियाओं एवं योग के आसनों ने शरीर की महामारी से लड़ने की क्षमता को बढाया.

प्रिय भारत के प्रधान मंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी ने योग को भारत में तो पुन: उसे पुनर्जीवित कर उसके यथोचित् स्थान पर स्थापित किया ही, पर साथ ही साथ देश से बाहर भी योग को प्रचलित करने में एक बहुत अहम् भूमिका निभाई है. माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी ने योग दिवस को न केवल भारत में प्रचलित किया वरन् विदेशों में भी भारत की इस तन-मन को शुद्ध करने वाली प्राचीन योग प्रक्रिया को कुछ ऐसा स्थापित किया कि विदेशी भी इसे सहर्ष स्वीकार कर इस पद्धति को अपने जीवन का महत्वपूर्ण अंग बना रहे हैं.

भारत में जिन्हें हम पुरानी कह कर मुँह बिचका लेते थे, प्राचीन भारतीय संस्कृति पर फब्ती कस कर उसका निरादर करते थे, आज वे ही भारतीय संस्कृति की भव्य धरोहरें विश्व में भारत का नाम ऊँचा कर रही हैं.

कोरोना की इस महामारी के कारण पिछले कुछ अंक प्रकाशित नहीं हो पा रहे हैं; "वसुधा" ई मैगज़ीन के रूप में ही अब प्रकाशित हो रही है.

स्वस्थ रहें, सानन्द रहें, दीपावली सबके हृदय की द्वेषाग्नि को शांत कर, सद्भाव की लौ प्रज्वलित करे, असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतंगमय के पावन पुनीत मंत्र से हृदयाकाश आलोकित कर गुंजित करे, इसी शुभाकांक्षा सहित, सस्नेह - स्नेह ठाकुर

# दीपों का त्योहार

डॉ. ऋतु माथुर

आया दीपों का त्योहार
जगमग करता यह संसार
मानो उतर आया हो नभ से झिलमिल तारों का परिवार।

ज्योतिर्मय है यह शुभवार शुभकामनाएँ देखो खड़ी है द्वार
नन्हे इन दीयों के सन्मुख
सदैव पराजित होता अंधकार।

उज्ज्वल है आज तिमिर का रूप मानो फैली हुई है धूप
पुण्य प्रकाश प्रवाह पाने को उत्कल
है मानव हृदय का कूप।

सुख-दुख की कोई बेला हो
या मानव मन अकेला हो
दीपों के इस पावन पर्व में
आलोकित हर जीवन का मेला हो।

दीप पर्व के इस पुनीत अवसर पर,
हे ईश्वर ऐसा वर दो
राग द्वेष से पीड़ित हर मानव की पीड़ा हर लो।

# गीता – अध्याय ०७ – ज्ञान-विज्ञान योग

**अविनाश कुमार**

इस अध्याय में हरि ब्रह्म, माया, भक्त और भक्ति के संतुलन के बारे में बताते हैं। प्रभु कहते हैं कि वे जड़, चेतन, पृथ्वी, आकाश, जल, वायु, अग्नि, भूत, भविष्य, सब चेतनाओं में व्याप्त हैं, और उनका स्मरण व पूजन किसी भी रूप मे किया जा सकता है।

**कृष्ण -**

ज्ञान तुम्हें, विज्ञान सहित, अब मैं तुम्हें बताता
जान जिसे, कुछ और जानना, शेष नहीं रह जाता (०२)

मेरा रूप न एक, यह है, अष्ट तत्व का मिश्रण,
भू, जल, वायु, नभ और मन, बुद्धि, अहम्, अगन (०४)
यह तो मेरा भौतिक वर्णन, चेतन रूप अनंत
परा शक्ति है चेतना, अक्षर पुरुष धरन्त (०५)

मैं अग्नि का तेज, महक हूँ - मैं धरती की मिटटी में,
भूत अभूत का सम, मैं हूँ - तपस्वियों की सिद्धि में (०९)

सर्व भूतों का बीज भय मैं, मूल हूँ मैं सनातन का
तेजस्वियों का तेज भी मैं, चेतन बुद्धिमानों का (१०)

अंत समय भी जिसकी बुद्धि, मुझमें होवे विलीन
सुख-दुःख, योग, ज्ञान, कर्म, सब देखें मेरे अधीन (३०)

# अध्याय ०८ – अक्षरब्रह्म योग

इस अध्याय में प्रभु ब्रह्म, जीव, कर्म की व्याख्या करते हुए पुनर्जन्म के सिद्धांतो पर प्रकाश डालते हैं। वे ज्ञान, अज्ञान के मार्ग का परिचय देते हैं और बताते हैं कब कैसा जीव पुनर्जन्म को प्राप्त होगा अथवा जीवन-मृत्यु चक्र से मुक्त हो जाएगा।

**कृष्ण**

अन्तकाल में मानव जैसी बुद्धि - भाव धरे
तत्पश्चात् वही गति, उस भाव को प्राप्त करे (०६)

**यथा मनोस्थिति, तथा परिस्थिति**

***किन्तु मनुष्य को यह कैसे ज्ञात होगा कि उसका अंतिम क्षण कब आएगा – या फिर उसके प्रिय जनों का अंतिम क्षण कब आएगा? इस तरह, किसी भी क्षण व्याकुल होने अथवा करने वाला मनुष्य स्वयं एवं निकट सम्बंधियों की परगति का कारण बनता है। प्रति पल स्थिर प्रज्ञ रहने से ही, किसी भी पल, प्राण छोडने की स्थिति में, मनुष्य ब्रह्म अवस्था को प्राप्त होता है।***

देह त्याग कर जीव,  परम गति को पावे,
मैं बतलाऊँ भेद पुराना, या फिर लौट के आवे (२३)
साधक शुक्लपक्ष जो, दिन में - उत्तरायण में जाते
परम गति हो प्राप्त उन्हें, न पुनः लोक में आते (२४)

कृष्णपक्ष व् दक्षिणायन  - रात्रि  प्राण है तजते
स्वर्ग प्राप्त कर वे वापस, पुनः पुनः जनमते (२५)

***यहाँ शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष का संदर्भ केवल चंद्रमा की आंत्रिक्षिक अवस्था का नहीं है – अपितु मन की भावना का है। यदि प्राण तजते हुए हमारी मनोवस्था प्रबल होती है, तो वह शुक्लपक्ष के बढ़ते चंद्रमा जैसी है। यदि प्राणान्त के समय हमारी अवस्था क्षीण होती है तो वह कृष्णपक्ष की भाँति कष्टदाई और पुनः जन्म लेने को प्रेरित करती है।***

## अध्याय ०९ – राज विद्याराज गुहर्योग

इस अध्याय में श्री कृष्ण भक्ति, प्रलय, सृष्टि, मोक्ष का बखान करते हैं और भक्तों को प्रलय से बचने एवं हरि कृपा से मोक्ष का द्वार दिखाते हैं।

मायावी मैं, पुनः पुनः संसार के रूप रचूँ
निज भाव प्रकृति को पावे, ऐसा प्रपंच बुनूँ (०८)
मैं ही यज्ञ, स्वधा मैं ही, मैं अग्नि, और हूँ कृतु
औषधि मैं, सामग्री मैं, मंत्र मैं, यज्ञ की  घृत (१६)
तपता मुझसे सूरज है, मैं वर्षा को बरसाता हूँ,
अमृत, मृत्यु मुझसे ही, मैं सत्य असत् कहलाता हूँ (१९)
जब तक उनका पुण्य हो मिलता, स्वर्ग के सुख का भोग
पुण्य क्षीण होने पर, वे लौटते मृत्युलोक
बार बार वे पुण्य कमाएँ, और गवाएँ पुण्य
स्वर्ग अस्वर्ग के बीच ही, भये निरंतर शून्य (२१)

**जो देव पितृ भूत को पूजें, पायें देव पितृ औ भूत**
**जो हरी पूजें, हरि पायें, जीवन चक्र से जाएँ छूट**

# कृष्ण चन्द्र, 'नीहार'–चकोर

डॉ. **अमलदार 'नीहार'**

गिरिधर–मुरलीधर–नटनागर, ग्वाल–सखा–माखन–चितचोर!
बाँध चपल मन, मेरे मोहन! गोपीवल्लभ–नन्दकिशोर!
काया का बन्धन कैसा है, माया का बन्धन कैसा है?
हो जाता पागल, जिसको डस लेता यह कन्चन कैसा है?
सम्बन्धों की अन्ध कसौटी, बन्धन लाभ–लोभ की डोर।
बाँध चपल मन, मेरे मोहन! गोपी–वल्लभ–नन्दकिशोर!
रीती है सबकी मन–गागर, पाशवसिद्ध सफल ही नागर,
अमिट तोष–आनन्द–प्रदाता, मोद–मेघ तू सुख का सागर।
मोहन! तेरी इस मुरली ने छुआ सभी के मन का छोर।
बाँध चपल मन, मेरे मोहन! गोपीवल्लभ–नन्दकिशोर!
कंस–दलन–मधुसूदन! तेरे यश का कितना करूँ बखान?
शेष–शारदा, नारद महाविशारद भी लेते चुन ठान।
तुमने सुनी पुकार सभी की, जिन पर पड़ी आपदा घोर।
बाँध चपल मन, मेरे मोहन! गोपीवल्लभ–नन्दकिशोर!
द्रुपदसुता के मीत मनोहर! हे 'गीता' के गीत मनोहर!
गुडाकेश के प्रीत अतुल तुम, हे प्रभु! तुझमें त्रिभुवन भास्वर।
विश्वमूर्ति! मैं कहूँ तुम्हें क्या ? कृष्ण–चन्द्र,'नीहार'–चकोर!
बाँध चपल मन, मेरे मोहन, गोपीवल्लभ–नन्दकिशोर!

# तुलसी के राम

**प्रो. त्रिभुवन नाथ शुक्ल**

भीमराव अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय में एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया. विषय था – "तुलसी के राम" और "कबीर के राम". मेरे दो प्रिय भाइयों – डॉ. पवन अग्रवाल और डॉ. बलजीत श्रीवास्तव का बहुत आग्रह रहा कि मैं उसमें कैसे भी पहुँचू. कोरोना काल था. स्तिथियाँ भयावह हो चली थीं. मन में बहुत विचार करने के बाद श्रीमती जी (विद्या शुक्ल) और चिरंजीवी पुत्र (वेदांत) के साथ अपनी गाड़ी से लखनऊ के लिए चल पड़ा. जबलपुर से प्रयागराज आ गया और दूसरे दिन लखनऊ पहुँच गया. रास्ते भर सोचता गया कि अध्यक्षीय भाषण करना है, वह भी तुलसी के राम पर, तो जो राम चाहेंगे बोल दूँगा. परन्तु मन न माना, मन में कुछ नया आता गया कि तुलसी के राम औरों के राम से कैसे भिन्न हैं. विचार करता गया. खैर व्याख्यान हो गया. कुछ मुझे और मुझसे अधिक आयोजक भाई बलजीत श्रीवास्तव को अधिक रुचिकर लगा. अभी कल ही उनका व्हाट्सएप्प पर सन्देश मिला कि उन्हें पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित करने के लिए पाँच अगस्त २०२१ तक निबंध चाहिए. मुझे प्रस्ताव अच्छा लगा. जब जो बोला सो बोला, अब लिखकर देना है, तो ऊहापोह में पड़ गया. पहले तो सोचा कि सन्दर्भ ग्रंथों के आधार पर कुछ लिख दूँ. परन्तु विडम्बना यह है कि इन दिनों प्रयागराज में महीने भर से हूँ. यहाँ पर मेरे पास कोई सन्दर्भ ग्रन्थ हैं नहीं. यदि कुछ है तो तुलसी हैं, उनके और हम सबके राम हैं और संयोजक भाई बलजीत श्रीवास्तव का स्नेहाग्रह है. स्मृतियों को इसी त्रिवेणी के आधार पर प्रयागराज में बैठकर इसे लिखने जा रहा हूँ.

तुलसी के राम दाशरथी राम हैं. सनातनी राम हैं. कौसल्या सुत है. जानकी नाथ हैं. भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्नके अग्रज हैं. अवध के प्राण हैं. "निसिचरहीन करहुँ महि, भुज उठाइ प्रण कीन्ह" के व्रती हैं. शिव के इष्टदेव मम बालक रामू हैं. 'पार्वती के संशय के निरसन' करने वाले हैं. रावणारि हैं. ऋषियों एवं मुनियों के सुखदाता हैं. गौतम नारि अहल्या के उद्धारक हैं. राष्ट्रधर्मी हैं. सनातनी हैं. एक पत्नीव्रती हैं. प्रजावत्सल हैं. कारुणिक हैं. अतिवीर हैं. पृथ्वी के समान धैर्यशाली हैं. समुद्र के समान गम्भीर हैं. कोदंड राम हैं. नीति, प्रीति, परमारथ और स्वास्थ्य के साधक राम हैं. मर्यादा पुरुषोत्तम राम हैं. 'अवधपुरी ममपुरी सुहावनि' कहने वाले राम हैं. स्नेह, दया और साख्य के प्रतिपालक राम हैं. आजान बाहु राम हैं. गुणवान राम हैं. शीलवान राम हैं. धैर्यशाली राम हैं. सखाधर्मी राम हैं. तुलसी के राम धर्म धुरंधर हैं. तुलसी के राम शिव आराधक हैं. तुलसी के राम परम वैष्णव हैं. तुलसी के राम मातु पितु भक्त हैं. तुलसी के राम लोकनायक हैं. तुलसी के राम जयसच्चिदानंद जगपावन हैं. गोस्वामी जी ने रामचरितमानस में एक घोषणा-पत्र जारी किया है और उस घोषणा-पत्र का उन्होंने अक्षरश: पालन किया है. **वह घोषणा-पत्र है -**

"अरथ धरम कामादिक चारी कहब ग्यान विज्ञान बिचारी"

अर्थात् मैं (तुलसीदास) अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष की बात कहूँगा. कैसे कहूँगा? यह एक प्रश्न है और इस प्रश्न का उत्तर है 'बिचारी'. बिचारी अर्थात् विचार करके कहूँगा और यह भी ज्ञान सम्मत और विज्ञान सम्मत होगा, तभी कहा जायेगा. कारण कि बहुत से तथ्य, विचार, स्थापनाएँ और मान्यताएँ कालबाह्य हो जाती हैं. उन्होंने रामचरितमानस की रचना अवधी में की. अवधी उस समय की सर्वाधिक प्रचलित काव्य-भाषा थी. लोक उनकी

बात जान सकें. अन्यथा वे बहुत अधीत और संस्कृतज्ञ थे. यह बात उनके प्रत्येक काण्ड के प्रारम्भिक श्लोकों से प्रमाणित होती है.

जहाँ तक तुलसी के राम का प्रश्न है, वह उनके घोषणा-पत्र के अनुरूप हैं. वे युगोचित लोकाराधक राम को वाणी देते हैं. इसका आधार है –

स्नेह दया च सौख्यं च यदि व जानकी मपि |
आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो मा नोव्यथा ||

ऐसे ही तुलसी के राम की प्रतिज्ञा है – "स्नेह, दया, सौख्य (सखाभाव)"| यहाँ तक कि यदि जानकी को भी छोड़ना पड़े तो मुझे कोई पीड़ा नहीं होगी.

प्रश्न उठता है कि राम यह सब किसके लिए त्याग रहे हैं. उत्तर स्पष्ट है – "लोकाराधन" के लिए. लोक में रहने वाली जनता के लिए . और राम ने यह सब कह कर नहीं, अपितु कर के दिखाया. राम ऐसा कैसे कर सके? बात बहुत साफ़ है, वे महात्मा (महान आत्मा) थे, इसलिए ऐसा कर सके. महात्मा का लक्षण बताया गया है –

मनष्येकं वचस्येकं कर्मस्येकं महात्मनाम् |
मनस्यन्यद वचस्यन्यद कर्मस्यन्यद दुरात्मनाम् ||

अर्थात् मन एक, वाणी एक, कर्म एक = महात्मा और मन भिन्न, वाणी भिन्न और कर्म भिन्न = दुरात्मा. ये ही महात्मन् राम तुलसी के राम हुए. तुलसी के समय जनमानस को गहरे सांस्कृतिक संकट से उबारने के लिए ऐसे ही राम की आवश्यकता थी. ये राम सत्त्वधरी भी हैं. अपने इसी सत्त्व से साधनों के आभाव में भी वे लंका पर विजय प्राप्त कर सके. कारण कि – क्रिया सिद्धिः सत्त्वे भवति महतामनोपकरणे अर्थात् क्रिया की सिद्धि सत्त्व (पुरुषार्थ) से होती है, न कि बड़े साधनों से. रावण के पास सभी संसाधन थे, परन्तु जीत होती है पुरुषार्थी राम की.

तुलसी के राम दशरथ सुत हैं. ये मनु और सतरूपा की तपोसधना के साकार विग्रह हैं. यही दशरथ कौसल्या के रूप में जन्म लेते हैं और राम का जन्म होता है. तप और यज्ञ की कोख से उत्पन्न राम जैसा इस पृथिवी पर अब तक कोई हो नहीं सका. और तुलसी को भी राम तपस्या की कोख से ही चित्रकूट के घाट पर मिल पाए. ऐसे ही जिनके सुफल थे, उनको मिल पाए थे. वही राम "सकल मुनिन्ह के आश्रमहि जाइ जाइ सुख दीन." आखिर जिनको भी राम के दर्शन का यह सुख मिला वे सब के सब तपी एवं व्रती थे.

तुलसी लिखते हैं 'आसन सिद्धि राम पद नेहू' अर्थात् राम के चरणों का स्नेह उन्हें प्राप्त होगा, अर्थात् हुआ है, जिन्हें आसन की सिद्धता प्राप्त हो गई है. तुलसी यहाँ भारत के जनमानस को कर्म का सन्देश देते हैं कि कुछ भी पाने के लिए आसन की सिद्धता (कर्म तप) आवश्यक है. और वे आगे इसका संकेत भी करते हैं 'तप बल बिस्नु सकल जगत्राता' और 'तप आधार सब सृष्टि भवानी'. यही तो राम के माध्यम से भातीय जनमानस को दिया जाने वाला तुलसी का सन्देश है. यहीं तुलसी अपने राष्ट्रजन के साथ खड़े दिखाई देते हैं.

इसी प्रसंग में मुझे राम के एक अन्य रूप का स्मरण हो रहा है. एक बार मैं चित्रकूट में अपने दीक्षागुरु स्वामी रामभद्राचार्य के साथ कुछ चर्चा कर रहा था. चर्चा के क्रम में उन्होंने बताया कि 'र' राष्ट्र और 'म' से मंगल. राम का अर्थ है – राष्ट्र का मंगल करने वाला. वैसे यह कोई व्युत्पत्तिक अर्थ है नहीं, परन्तु भावित अर्थ माना जा सकता है.

तुलसी ने भी अपना भाव प्रकट करते हुए लिखा है – 'मंगल करनि कलि मल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की'. यह रघुनाथ गाथा राष्ट्र मंगल-गाथा है इसी सूत्र में मणियों की माला की तरह सब कुछ गुथा हुआ है. इसे

तुलसी सीधे नहीं अपितु राम के चरित्र का सम्बल लेकर यथा प्रसंग कहते चलते हैं. उनका यह कथन अति सरल है और अति गूढ़ भी, यह मूर्ख की समझ में भी घुस जाती है और पंडित के भी.

मेरे परिवार में एक बड़े भाई थे. मेरे दादा के लड़के चंद्रशेखर शुक्ल. जिन्हें गाँव में प्रहलादी नाम से बुलाया जाता था. एकदम निरक्षर थे. परन्तु क्या कमाल था कि उन्हें अधिकांश रामचरितमानस कंठस्थ था. गोरु चराते और साथी चरवाहों को मानस का अर्थ समझाते चलते थे. एक बार मुझे भी उनके साथ ऐसे ही सन्दर्भ में सत्संग का अवसर मिला.  तब मेरी यही स्थिति थी – 'समुझि परेहु नहिं बालपन, तब अति रहेहुँ अचेत'.

ऐसे ही मेरे गाँव के पास एक पटवारी जी थे. उनसे जब कोई कुछ भी पूछता तो वे उसका उत्तर रामचरितमानस से ही देते थे. एक बार मैं उनके पास गया. वे अपने खेत में काम कर रहे थे. मैंने पूछा कि पटवारी जी क्या कर रहे हैं?  उन्होंने तपाक से कहा – कृषी निरावहिं चतुर सुजाना'. ये हैं – जन-जन में व्याप्त तुलसी के राम.

तुलसी के राम सनातनी हैं. हमारे भारतीय साहित्य के आद्यांत में राम के जिस स्वरूप का वर्णन है, वह सनातनी ही है. तुलसी ने साहित्य में लुप्त होते जा रहे सनातनी तत्त्वों की वापसी राम के माध्यम से की है. जो सदैव गतिशील और काल धर्म से पुनर्व्याख्यायित होता चला है, वही सनातन है. राम भी इसी रूप में सनातनी हैं. वैदिक राम, वाल्मीकि के राम, कबीर के राम, तुलसी के राम, निराला के राम, नरेश मेहता के राम सब सनातनी हैं. गोस्वामी जी ने सनातनी राम को काल-धर्म के अनुसार व्याख्यायित किया है. और इतना ही नहीं उन्होंने लुप्त हो रहे सनातनी सत्ग्रंथों की भी चिंता की है. वे लिखते हैं – 'हरित भूमि तृण संकुलित, समुझि परहि नहिं पंथ / जिमि पाखण्डवाद ते लुप्त होहिं सदग्रंथ.' इस खतरे से हमें और हमारे साहित्य को उबरने की संजीवनी इसी सनातनी साहित्य और राम के सनातनी विग्रह से मिल सकेगी. तुलसी साहित्य इसका पोषक भी है और उद्घोषक भी.

Commented [DST1]:

तुलसी के राम कौसल्या सुत हैं. वे लिखते हैं – 'भये प्रगट कृपाला दीनदयाला कोसल्या हितकारी.' राम हितकारी हैं. आगे वे लिखते हैं – 'अद्भुत रूप विचारी'. सनातनी राम उन्हें अद्भुत लगे.  स्वामी रामभद्राचार्य ने 'विचारी' की जगह – 'निहारी' पाठ दिया है. उनका तर्क है कि जब राम प्रगट हुए तो कौसल्या उनके रूप पर विचार करेंगी कि 'निहारेंगी' देखेंगी. खैर जो कुछ भी, उनका प्राकट्य सनातनी है.

तुलसी के राम जानकी नाथ हैं, सीतापति हैं. इसीलिए राम का वनवास होने पर सीता उनके साथ जाने का आग्रह करती हैं. यह आग्रह भी सनातनी है. इसका एक सुन्दर-सा आख्यान अध्यात्म रामायण में मिलाता है. वहाँ जब सीता राम के सामने वन जाने का प्रस्ताव रखती हैं तब राम उन्हें वन के कष्ट बताते हुए न चलने की सलाह देते हैं. तब सीता राम से कहती हैं कि क्या कभी ऐसा हुआ है कि राम वन गए हों और उनके साथ सीता न गई हों. यह सन्दर्भ संकेतित करता है कि राम बार-बार वन जाएँगे और उनके साथ सीता होंगी. यह सन्दर्भ हमारे सनातनी इतिहास की चाक्रिक अवधारणा को बल प्रदान करता है. तुलसी ने इन सबसे गुजरते हुए सीतापति राम के शील और स्वभाव की चर्चा की है.

भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न के अग्रज हैं – राम. पूरे विश्व साहित्य में ऐसा भातृप्रेम दुर्लभ है. राम जब अयोध्या लौटते हैं तो भरत को स्वयं स्नान कराते हैं और उनके जटा-जूट को स्वच्छ करते हैं. यही नहीं बचपन में जीत कर भी हार जाने का भाव प्रकट करते थे. स्वयं भरत कहते हैं – 'हारेहुँ खेल जितावहिं मोंही और कबहुँ न कीन्ह मोर मन भंगू.'

ऐसा ही स्वयं राम भरत के विषय में कहते हैं – 'भरत हंस रबिबंस तड़ागा/ जनमि कीन्ह गुण दोष बिभागा/ गहि गुनपय तजि अवगुन बारी/ निज जस जगत कीन्ह उजियारी.'

तुलसी के राम शाश्वत (सनातनी), अप्रेमय, अनघ, निर्वाण (मोक्ष), शान्तिप्रद (शांति देने वाले), ब्रह्मा शम्भु फणीन्द्र सेवी, वेदांत वेद्य, विभुं, रामाख्यं (= राम ऐसा कहे जाने वाले) जगदीश्वर, देवताओं के गुरु, माया के रूप में मनुष्य रूपधारी भगवान, करुणाकर, राजाओं के चूणामणि हैं. इन स्वरूपों को तुलसी ने राम का स्मरण करते हुए लिखा है – शान्तं शाश्वतमप्रेयमनधं निर्वाण शांतिप्रदम/ ब्रम्हाशम्भुफणीन्द्रसेवमनिशं वेदांतवेद्यम् विभुम्/ रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुंमायामनुष्यं हरिम्/ वन्देऽहं तं शेषकारणपरं भूपाल-चूणामणिम्.' इसमें तुलसी के राम अपने पूरे स्वरूप में विद्यमान हैं. यही विद्यमानता रामचरितमानस में प्रयुक्त कुल राम शब्द १४४३ (चौदह सौ तैंतालीस) में गर्भित है. इसी प्रकार से श्रीरामचरितमानस में सीता शब्द १४७ बार आया है. जानकी शब्द ६९ बार और वैदेही शब्द ५१ बार आया है. ये सभी शब्द प्रयोग रामभावी हैं. कारण राम और सीता अभिन्न हैं. ये वैसे ही अभिन्न हैं जैसे जल और उसकी लहर.

तुलसी के राम में अवध है और अवध में राम हैं. 'जहाँ राम तहँ अवध निवासू' की तरह. राम अवध के प्राण हैं. उनके वनवास जाने पर अवध के लोग प्राणहीन हो गए. वे राम के पीछे-पीछे दौड़ पड़े. राम और अवध जनों में मीन और नीर का सम्बन्ध है. 'सुखी मीन जिमि नीर अगाध.' की तरह.

राम की प्रतिज्ञा थी – मैं पूरी पृथ्वी को निसाचरों से रहित कर दूँगा. उन्होंने ऐसा ऋषि-मुनियों को आश्वस्त किया था – 'निसिचर हीन करहुँ महि भुज उठाइ प्रन कीन्ह. सकल मुनिन्ह के आश्रमहि जाइ जाइ सुख दीन्ह.'

तुलसी के राम की यह प्रतिज्ञा केवल लंका के राक्षसों के लिए नहीं, अपितु पूरे पृथ्वी के राक्षसों के लिए थी. उन्होंने अपनी इस प्रतिज्ञा को पूरा करके पृथ्वी पर धर्म की पुन: स्थापना की.

तुलसी के राम शिव के ईष्ट हैं. पार्वती को संशय हुआ कि पूरा संसार जिन शिव को जपता है वे 'बालक राम' को जपते हैं. शिव के ईष्ट हैं – 'ईष्ट देव मम बालक रामू.' तब पार्वती शिव की आज्ञा से ही परीक्षा लेने के लिए चल पड़ीं. परन्तु उनसे एक ही चूक हो गई कि उन्होंने सीता का रूप धारण कर लिया. और राम उन्हें देखकर कह पड़ते हैं – 'विपिन अकेलि फिरहि केहि हेतु'. सती ने शंकर को कुछ नहीं बताया कि उन्होंने कैसे परीक्षा ली. परन्तु 'तब देखेउ संकर करि ध्याना.' यह बहुत बड़ा अनर्थ हो गया और शंकर ने प्रतिज्ञा की – 'यह तन सती भेंट अब नहीं.' तुलसी यहाँ संकेत करना चाहते हैं कि राम पर संशय करने वाला निश्चित ही दुर्दशा को प्राप्त होगा.

इस सन्दर्भ में मुझे एक प्रसंग का स्मरण हो रहा है. जब राम सेतु पर बहस चल रही थी. तब उसी समय राजेन्द्र यादव और डॉ. मुरली मनोहर जोशी की एक बहस किसी टी.वी. चैनल पर आ रही थी. राजेंद्र यादव श्रीकृष्ण हुए हैं यह तो मान रहे थे, परन्तु राम हुए ही नहीं, उन्हें काल्पनिक बता रहे थे. वहीं डॉ. जोशी अनेक साहित्यिक एवं वैज्ञानिक प्रमाणों से राम और राम सेतु को मानने के पक्षधर थे. तो मैं यह कह रहा था कि संशय करने वाले अब भी हैं. परन्तु उनकी भी यही स्थिति हुई है जो सती की हुई थी – 'संशयात्मा विनश्यति'.

राम रावणारि हैं. फिर भी राम ने धर्म युद्ध के द्वारा रावण का वध किया. उनका अवतरण ही रावण के वध के लिए हुआ था. फिर भी उन्होंने उसे कई बार अवसर दिया कि वह अधर्म को नीति छोड़कर अभय प्राप्त कर ले. यह उनकी मर्यादा थी. राम ने सर्वत्र मर्यादा का पालन किया है.

राम ऋषियों एवं मुनियों के सुखदाता थे. अहल्या का उद्धार किया. अहल्या ने राम को जनसुख और प्रणतिपाल भगवंता कहा है. तुलसी के राम नीति, प्रीति, परमार्थ एवं स्वार्थ के परम ज्ञाता हैं. वे लिखते हैं –

'नीति, प्रीति, परमारथ स्वास्थ, कोउ न जान जस राम जथारथ.' अर्थात् राम के समान अन्य कोई नहीं जो नीति, प्रीति, परमार्थ और स्वार्थ को यथारत अर्थात् सही अर्थों में जानता है. इसीलिए वे सर्वत्र विजयी हुए.

राम के समान सखा धर्म का पालन करने वाला शायद ही कोई दूसरा हो. चित्रकूट में राम को मनाने जब भरत और वशिष्ठ जा रहे थे, उस समय राम ने केवट (जो उनका सखा था) को गले लगाया. केवट को ऐसा स्नेह देने से गुरु वशिष्ठ भी चूक गए थे. बाद में उन्होंने इस चूक को सुधार लिया था. केवट का सखा भाव राम के प्रति ऐसा था कि वह पूरी वनवास की अवधि में झूँसी में गंगा तट पर वट वृक्ष के नीचे तप में रत रहा. राम जब लंका से वापस आए तब तो केवट से मिलने के बाद ही अयोध्या गए. वह वट वृक्ष आज भी विद्यमान है. इसके नीचे अनेक महापुरुषों ने तपस्या करके सिद्धि प्राप्त की है. वर्तमान में यह वट वृक्ष क्रिया योग आश्रम में है. यहीं पर 'हंस कूप' और थोड़ी दूरी पर 'समुद्र कूप' भी हैं. हाँ, तो मैं सखा धर्म की बात कर रहा था. राम ने विभीषण को वचन दिया था लंकेश बनाने का, उसका उन्होंने पूर्ण निर्वाह किया. राम ने कहा था – 'सखा सोच त्यागहुँ बल मोरे/ सब विधि घटब काज मैं तोरे.' लक्ष्मण को जब शक्ति लगी तब राम ने कहा था – 'तात की सोच न मातु की सोच न सोच पिता वनवास गए की/ सोच है मोहि विभीषण के बाह गहे की.' राम ने विलाप करते हुए कहा था कि मुझे विभीषण के बाह गहे की चिंता है. इससे बड़ा सखा भाव का पालन करने वाला और कौन को सकता है? तुलसी के राम शिव के उपासक हैं. गोस्वामी जी ने लिखा है –'जग जप राम राम, जप जेहीं.'

और रामेश्वर में भी – 'लिंग थापि विधिवत् करि पूजा/सिव समान प्रिय मोहि न दूजा.' और भी – 'सिव द्रोही मम दास कहावा/ सो नर सपनेहूँ मोहिं न पावा.' तुलसी के राम 'रामोविग्रहवान धर्मो' हैं. वे अनंत हैं और उनकी कथा भी अनंत है. इसीलिए रामायण सत कोटि अपारा कहा जाता है. न तो कथा का अंत है और न ही राम का. एक राम अवध बिहारी हैं. एक राम जनक तापहारी हैं. एक राम वनवासी हैं. एक राम जातुधान नाशक हैं. तुलसी के राम सच्चिदानंद हैं – जय सच्चिदानंद जगपावन/ अस कहि चलेउ मनोज न सावन.' इस सच्चिदानंद स्वरूप का अपना एक गहरा प्रतीकार्थ है. इसका अपना एक आनुपूर्वी क्रम है –

- सत् नैरंतर्य अथवा स्थायित्व का भाव है, जो त्रिकालाबाधित होकर बने रहने वाला है.
- चित् का तात्पर्य आत्मा और सभी प्रकार के तत्वों से है. अर्थात् विचार का चिंतन /यह सनातनी है.
- आनंद का तात्पर्य है – अनुभव अथवा आस्वाद अथवा रस. इसी से रस की निष्पत्ति होती है. इसे हमारा काव्य-शास्त्र ब्रह्मानंद सहोदर कहता आया है. इसीलिए इसे 'रसो वै स:' कहा गया है. लेकिन इसे पदार्थ वादी नहीं मानते. ये तीनों (सत्, चित्त और आनंद) युगपद चलते हैं. यदि सत् नहीं होगा तो चित् हो ही नहीं सकता. और यदि सत् और चित् नहीं हैं तो वह आनंद का जनक कैसे हो सकता है? इसके लिए जिस प्रकार हृदयगत निर्मलता, बुद्धिगत निस्संगता और आचरणगत पावनता अपेक्षित है, वह भूमि विशेष की गंध से जुडी हुई है और सनातन है. वही जीवन का संकेतक भी है. इन दोनों के संपृक्त हो जाने पर आनंद का उदय होता है जो कि 'सत्यं, शिवम्, सुन्दरम, का बीजभाव है. ऐसा बड़ा भाव रखने वाला रचनाकार विश्व के किसी भी देश का हो वरेण्य होगा, जैसा कि तुलसीदास हैं.

जब हम तुलसी के राम की बात करते हैं, जब हमारे सामने इसके तात्पर्यार्थ का पहला प्रश्न खड़ा होता है कि तुलसी ने राम को किस दृष्टि से देखा है? वाल्मीकि से लेकर नरेश मेहता के संशय की एक रात तक के राम कहाँ और किस रूप में तुलसी साहित्य में उपस्थित हैं. तुलसी की समस्त रचनाओं के केंद्र में केवल एक ही चरित्र है – 'राम'. कैसे भी कहना है, कुछ भी कहना है तो विषय तो एक ही होगा 'राम' और यहाँ तक कि कृष्ण

के स्मरण का भी प्रश्न आया तो राम के स्वरूप में आने की शर्त पर ही मस्तक झुकाने की शर्त रख दी – 'कित मुरली कित चन्द्रिका कित गोपियन के साथ/ तुलसी मस्तक तब नवै धनुष वाण लौ हाथ.' उनकी समस्त रचनाओं के केंद्र में राम ही हैं और राम के बिना वे जग में जीना ही व्यर्थ मानते हैं – 'जरि जाउ सो जीवन जानकी नाथ/ढ़ जियई जग में तुम्हरो बिनु ह्वै.' नाना पुराण निगमागम सम्मतं और क्वचिदन्यतोऽपि के आधार पर उन्होंने राम के स्वरूप का जो विग्रह तैयार किया, वह विग्रह है, एक मर्यादित राष्ट्र पुरुष का जो दोनों हाथ उठाकर प्रण करता है – 'निसिचर हीन करहुँ महि, भुज उठाइ प्रण कीन्ह.' रघुवंशियों में 'प्रण' उनके मूल चरित्र के केंद्र में है. उस प्रण के लिए वे अपना सर्वस्व त्याग करने में एक क्षण भी नहीं ठहरते. उनका आधार वचन है – 'प्राण जाई पर बरु वचन न जाई.' यह सामान्य बात नहीं, अपितु बहुत बड़ा मूल्यबोध है. इस मूल्यबोध का धरातल आज खिसकता हुआ लग रहा है. यह न खिसक पाए, इसके लिए हमें तुलसी के 'राम' की ओर निहारना होगा. उनको निहारने के बाद फिर किसी को निहारने की आवश्यकता ही नहीं.

Commented [DST2]:

जैसा कि माखनलाल चतुर्वेदी ने लिखा है – 'जब वे रूप निहार लिए तो देखा क्या, अनदेखा क्या?' हनुमन्नाटक 'कल्याणां निधान' कहता है तो तुलसी 'मंगलानां च कर्तारौ' कहते हैं. हनुमंन्नाटक 'कलिमल मथनं' कहता है तो तुलसी 'कलिमल हरनि' कहते हैं. हनुमन्नाटक 'पावनं पावनानां' कहता है तो तुलसी 'कलि कलुष नसावनि' कहते हैं. हनुमन्नाटक 'मुमुक्ष पाथेय' कहता है तो तुलसी 'संशय विहग उड़ावनहरी' कहते हैं. कुल मिला कर तुलसी के राम सनातनी और सच्चिदानंद हैं.

स्वयं भगवन शंकर कहते हैं – जय सच्चिदानंद जग पावन, अस कहि चलेउ मनोज नसावन.

- तुलसी की रामकथा के लिए विमल विवेक की अपेक्षा है – भनिति मोर सब गुन रहित विस्वविदित गुन एक/ सो विचारि सुनिहहिं सुमति जिन्हके विमल विवेक.'
- तेहि महुँ रघुपति नाम उदारा अति पावन पुरान श्रुति सारा.
  मंगल भवन अमंगल हारी/ उमा सहित जेहिं जपत पुरारी.
  भनिति विचित्र सुकवि कृत जोऊ/ राम नाम बिनु सोह न सोऊ.
  विधु वदनी सब भाँति सवाँरी/ सोह न बसन बिना बर नारी.
- मंगल करनि कलिमल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की.
- तुलसी के राम संघर्षरत राम हैं. वे कहते हैं – दैव ने मुझ पर विपत्तियाँ डालीं और मैंने, मनुष्य ने उन विपत्तियों पर विजय प्राप्त की. दैव सम्पादितो\दोषों मनुष्येण मयाजित:. 'मनुष्येण मयाजित:' की सार्थकता राम को 'राम' बनाती है. राम का यह उद्घोष मनुष्यमात्र के लिए महौषधि है. आत्मबल प्रदान करता है. संघर्षशील बने रहने के लिए प्रेरित करता है. तुलसी के राम 'भव भय मंगलकारी' हैं.
- वाल्मीकि का मूलाधार है – लोके. को चास्मिन्साम्प्रतं लोके गुणवान कश्च वीर्यवान/ धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्य वाक्यों दृढव्रत:/ चरित्र्येण च को युक्त: सर्वभूतेषु को रत:. भवभूति के राम कहते हैं – स्नेह दया च यदि वा जानकी मपि, आराधनाय लोकश्च मुन्चतो मा नो व्यथा. तुलसी के राम वाल्मीकि और भवभूति के राम से थोडा भिन्न हैं. वाल्मीकि और भवभूति के राम असाधारण पराक्रम संघर्ष की क्षमताओं से युक्त हैं. वे लौकिक स्थितियों से टक्कर लेते हैं. उन पर लीलाधारी होने आवरण नहीं पड़ा है. तुलसी के राम सर्वशक्तिमान हैं. बाबा फटकारते हुए कहते हैं – राम मनुज कस रे सठ बंगा/ धन्वी कामु नदी पुनि गंगा/ पसु सुरधेनु कल्पतरु रूखा/ अन्नदान अरू रस पीयूषा.

- तुलसी के राम की पाँच मुख्य विशेषताएँ हैं – १.साधुजनों (सज्जनों) की रक्षा अर्थात् धर्म रक्षा. २. दलितों एवं वंचितों को गले लगाना ३. सदाचरण अर्थात् सत् के मार्ग पर चलना ४. भालू, बंदरों से सहायता लेना अर्थात् सबको साथ लेकर चलना. ५. समन्वय करके चलना. ऐसे राम के लिए तुलसी ने कहा है – रीझि भज्यो या खीझि.'

इस निबंध की चूर्णिका हो गई थी. फिर विचार आया कि 'क्वचिदन्यतोपि' शेष है. तुलसी के राम समग्र मानवीय उचाईयों के मानदण्ड हैं. वाल्मीकि, कालिदास और भवभूति के भी अपने-अपने मानदण्ड थे. वाल्मीकि जहाँ यथार्थपरक आदर्श के कवि हैं, वहीं कवियश: प्रार्थी आदर्शवादी यथार्थ के कवि हैं. वाल्मीकि ने जिसे मन्त्र दृष्टा की तरह देखा था, छुआ था, सुना था, गाया था, उसे तुलसी ने पाया है, जन और जनपद तक पहुँचाया है. वाल्मीकि के राम की प्रतिभा कालजयी थी. भारतीय प्रज्ञा ने वहाँ अर्चना के नवधा प्रकारों से पुष्प के पहाड़ लगा दिए. वैशणव आगमों की प्राचीनतम परम्पराएँ राम को खोजती हुईं बहुत पीछे तक चली गईं. मंदिरों की दीवारों उपासना के शतकोटि – प्रदीपों से प्रकाशमय हो रही थीं. आदि कवि के क्रौंच-कंठ की करुण पुकार से राम कथा का उदधि दीपों में छा गया. उसे ही तुलसी ने दशाश्वमेध पर केन्द्रित किया. वे स्वभाव और संस्कार दोनों से वैखानस थे. इस परम्परा का दार्शनिक इतिहास अत्यंत पुरातन है. तुलसी इसी सनातनी परम्परा के आचार्य हैं. वे आत्मद्रष्टा हैं. उनकी आत्मानुभूति की परिधि में पूरा जगत है. उनकी यह अनुभूति रामकार थी. दशरथ राम के पिता हैं. कौसल्या राम की माता हैं. राम के वियोग में व्यथित दशरथ और कौसल्या की आत्म-यात्रा और राम से उनका भावनात्मक राग तुलसी की सबसे बड़ी थाती है. इसी पारिवारिक कथात्मक वृत्त को विस्तार देकर वे अपरिमेय हो गए. उन्हें अपरिमेय बनाने में सहायक बनते हैं – 'हनुमान. वैसे तो वे भरत, गीध, सबरी, केवट, विभीषण सबके साथ अपने व्यक्तित्त्व का विलियन कर सहृदयों से साधारणीकरण के आधार बनते हैं. वे यहाँ भूमा के कवि की कोटि में पहुँच जाते हैं. इसका सबसे बड़ा आधार है उनमें द्रौपदी की तरह करुण चीत्कार भी और प्रह्लाद का दृढ़ निश्चय और सहिष्णुता भी. ध्रुव की आत्मग्लानि भी है और केवट, गीध, शबरी की वैष्णवी विनय भी. उनके व्यक्तित्व में सहजता है. उनके लक्ष्य में अंगद की दृढ़ता, अन्तस् में हनुमान की राम रति और नेत्रों में सियराममय जग है. अपने समय के सांस्कृतिक प्रलय में समाया हुआ भारतवर्ष पुन: तुलसीदास की वज्रांगुलि पकड़कर वाल्मीकि के राम को खोजता हुआ वेद और वेदांत के शिखरों पर चढ़ गया.

महाकवि तुलसी के राम समग्र मानवीय ऊँचाइयों के आधार दंड हैं. वाल्मीकि जहाँ यथार्थवादी आदर्श के कवि हैं, वहीं तुलसीदास कवियश: प्रार्थी आदर्शवादी यथार्थ के कवि हैं. वाल्मीकि ने जिसे मन्त्रदृष्टा की तरह देखा था, छुआ था, सुना था, गाया था, उसे महाकवि तुलसी ने पाया है, जन और जनपद तक पहुँचाया है. वाल्मीकि के राम की प्रतिभा कालजयी थी. भारतीय प्रज्ञा ने वहाँ अर्चना के नवधा प्रकारों से पुष्प के पहाड़ लगा दिए. वैष्णव आगमों की प्राचीनतम परम्पराएँ राम को खोजती हुईं बहुत पीछे तक चली गईं.

- मंदिरों की दीवारें उपासना के शतकोटि-प्रदीपों से प्रकाशमान हो रही थीं. वाल्मीकि के क्रौंच कंठ से उद्भूत करुणा से रामकथा की मन्दाकिनी प्रसारित हो चली और वही प्रवाह दशाश्वमेध पर तुलसी के रूप में प्राप्त हुआ. तुलसी वैखानस थे. यह उनके स्वभाव और संस्कार से पुष्ट होता है. यह परम्परा सनातनी है. तुलसी इसी परम्परा के श्रेष्ठ आचार्य हैं. इस रूप में वे हमारे सामने एक आत्म द्रष्टा कवि के रूप में आते हैं. तुलसी का समस्त रचना जगत आत्मानुभूति का वाचिक विस्तार है. तुलसी की यह अनुभूति रामाकार थी. राम का पारिवारिक रागात्मक सम्बन्ध चाहे वह माता-पिता से हो, अथवा किसी

भी पुरजन परिजन से हो और इससे भी आगे चाहे सरयू से हो, अपूर्व है. तुलसी ने इस भावात्मक राग को बहुत विस्तार दिया है.

- तुलसी के राम जितने वीर-धीर है, उतने ही प्रशांत भी. तुलसी और उनके राम दोनों ही अवसाद से मुक्त हैं.
- तुलसी के राम भारतीय-काव्य-चेतना के युगांतर व्यापी हैं.
- तुलसी के राम के सद्चरित्रों का विस्तार इतना व्यापक है कि वह आकाश की तरह पूरे विश्व में व्याप्त है.
- तुलसी के राम में मानवीय गुणों के सभी उच्चतम विभूति/भाव तदाकारित हो उठे हैं.
- तुलसी के राम अनादि और अनन्त हैं – राम अनादि अवध पति सोई.
- तुलसी के राम कालं महाकाल कालं कृपालम् एवं वेदान्तवेद्यं विभुम हैं.

अब मैं इस विषय को यहीं विराम देना चाहूँगा कारण कि हरि अनंत हरी कथा अनंता.

# माला जगमगा गई

## अजय जैन 'विकल्प'

लो शुभ दीपावली आ गई,
मंद-मंद मुस्कानें छा गई।

मौसम भी करवट बदलने लगा,
दीपों की माला जगमगा गई।

भूमि पुत्र का चेहरा खिल गया,
मानो मन की मुराद पूरी हो गई।

मंगल गीतों-ढोल से आँगन रोशन,
हर सू लहर खुशी लहरा गई।

माँ लक्ष्मी का आशीष बरसता रहे,
प्रेम की चादर सबको ओढ़ा गई।

साथ मिल सब मनाएँ दीपावली,
मिल रूठों को मनाएँ, दीवाली कह गई॥

# ७१वीं पुण्यतिथि पर सरदार वल्लभभाई पटेल का स्मरण

**पद्मश्री डॉ. रवीन्द्र कुमार**

*"आपको यह अवश्य स्मरण रहना चाहिए कि आपने जिस स्वतंत्रता को प्राप्त किया है, वह उत्तरदायित्वों के निर्वहन की अपेक्षा भी करती है।* (इस हेतु), *लोगों को इस प्रकार व्यवहार करना चाहिए कि जिससे यह प्रकट हो कि वे* (वास्तव में ही) *नई के स्वतंत्रता के योग्य हैं। उनमें आपसी समझ और सहनशीलता के साथ ही सामान्य हितों* (की प्राप्ति) *के लिए सहमति होनी चाहिए..."*–सरदार वल्लभभाई पटेल

१५ अगस्त, १९४७ ईसवीं को ब्रिटिश दासता से मुक्ति के बाद साढ़े पाँच सौ से भी अधिक देशी राज्यों का भारतीय संघ में विलय कराकर देश की अभूतपूर्व राजनीतिक एकता का निर्माण करने वाले, संगठित भारत के निर्माता सरदार वल्लभभाई पटेल की १५ दिसम्बर, २०२० ईसवीं को सत्तरवीं पुण्यतिथि थी।

सरदार वल्लभभाई पटेल देश की एकता के निर्माण जैसे भगीरथ कार्य को अपनी उच्च और परिपक्व राष्ट्रीय राजनीतिक सोच के बल पर, जिसके मूल में विशुद्धतः भारत की एकता, अखण्डता, समृद्धि और आन्तरिक व बाह्य दोनों रूपों में सुरक्षा थी, कर सके थे। इसी के साथ, वे देशवासियों, सभी आम और खास को, अपने व्यवहारों में प्राचीनकाल से भारतीयता की पहचान के रूप में स्थापित सहनशीलता के आधार पर वृहद् जन-कल्याण के लिए कार्य करने, व राष्ट्र हित को अपने परम कर्त्तव्य के रूप में सर्वोच्च रखने की अनुभूति कराकर उनका सहयोग लेकर भी कर सके थे। इस संक्षिप्त चर्चा के प्रारम्भ में उद्धृत स्वयं सरदार पटेल के लघु वक्तव्य से यह बात पूर्णतः स्पष्ट है।

पाँच सौ पचास से अधिक देशी राज्यों के, जिनका कुल क्षेत्रफल लगभग छह लाख वर्ग मील था, भारतीय संघ में विलय के साथ ही देश के दो भागों में विभाजन के बाद सरदार पटेल ने लाखों लोगों की पाकिस्तान-भारत में अदला-बदली कराई, और पाकिस्तान से भारत आए लाखों शरणार्थियों के लिए राहत और पुनर्वास की व्यवस्था भी कराई। इस कार्य को उन्होंने देशवासियों को स्वाधीन राष्ट्र में उनके कर्त्तव्यों – जनकल्याण व सुरक्षा हेतु उनके उत्तरदायित्वों का भान कराते हुए अति कुशलतापूर्वक सम्पन्न किया। १४ दिसम्बर, १९४७ को कटक (उड़ीसा) में अपने जन-सम्बोधन द्वारा जिस प्रकार देश के लोगों का स्वतंत्र भारत में उनके कर्त्तव्यों की याद दिलाते हुए उन्होंने आह्वान किया, वह बहुत ही श्रेष्ठ एवं महत्त्वपूर्ण था, तथा वह आज तक भी प्रासंगिक है। सरदार पटेल ने कहा था, *"हमने जो स्वराज प्राप्त किया है, उसके फल* (अपने कर्त्तव्यों का पालन करते हुए) *हमें चखने हैं..." भारत अब स्वाधीन और स्वतंत्र है... सामूहिक इच्छाशक्ति, और कड़ी मेहनत से* (इसे अपने कर्तव्य के रूप में लेते हुए) *आप देश को समृद्ध बनाएँ...अपने सभी मतभेदों को* (अब) *आपको सुलझाना चाहिए और सामान्य हित में और राष्ट्र की एकता, सुरक्षा और समृद्धि के लिए कड़ा परिश्रम करना चाहिए।"*

भारत की स्वतंत्रता के तुरन्त बाद पूर्वी पंजाब में जनसंख्या के आदान-प्रदान की प्रक्रिया में एक गम्भीर समस्या उत्पन्न हो गई थी। भारत से पाकिस्तान की ओर जाने वाले लोगों के एक बड़े जन-समूह को अमृतसर में रोक लिया गया था, जिससे दूसरी ओर से भारत आने वाले लाखों शरणार्थियों के लिए भी बड़ा खतरा उत्पन्न हो

गया। ऐसी गम्भीर स्थिति में सरदार वल्लभभाई पटेल अविलम्ब अमृतसर नगर पहुँचे। उसी दिन, ३० सितम्बर, १९४७ को एक सार्वजनिक सभा में उन्होंने लोगों का, व्यापक जन हित व राष्ट्र के प्रति अपने कर्त्तव्यों के निर्वहन हेतु सहिष्णुता के साथ व्यवहार करने का आह्वान किया। उन्होंने लोगों को वास्तविकता की अनुभूति कराई और जिस प्रकार गम्भीर समस्या का अति कुशलता व बुद्धिमानी से सफलतापूर्वक समाधान किया, वह आजतक भी अद्वितीय, प्रासंगिक और अनुकरणीय है।

अपने जन-सम्बोधन में सरदार पटेल ने सबसे पहले कहा, *"हमने अपने देश को महान और समृद्ध बनाने के लिए स्वतंत्रता प्राप्त की है, न कि उस थोड़े-बहुत को भी नष्ट करने के लिए जो हमारे विदेशी शासकों ने हमें सौंपा है। यदि हम सावधान नहीं रहते हैं, तो हम अपनी दीर्घकाल से प्रतीक्षित उस स्वतंत्रता को भी गवा देंगे, जिसे हमने इतने कष्टों और संघर्षों के बाद प्राप्त किया है। आपको स्मरण रहना चाहिए कि लाखों लोगों का जीवन दाँव पर है; उनके जीवन को, अपने प्रतिशोध या प्रतिशोध-भावना की पूर्ति के लिए, दाँव पर नहीं लगाया जा सकता। यह आवश्यक है कि आप शान्ति बनाए रखें और आक्रमण, प्रति-आक्रमण और प्रतिशोध के दुष्चक्र को तोड़ें, और यह देखें कि शरणार्थी सुरक्षित निकल जाएँ।"* लोगों को मानवीयता की अनुभूति कराते हुए सरदार पटेल ने आगे कहा, *"शरणार्थियों के विरुद्ध लड़ना, वास्तव में, कोई लड़ाई ही नहीं है। मानवता या युद्ध का कोई भी कानून आश्रय और सुरक्षा की माँग करने वाले की हत्या की अनुमति नहीं देता है...आप* (इसलिए,) *विवेक और दूरदर्शिता के साथ ही काम करें।"*

सरदार पटेल ने लोगों से भारतीयता की मूल भावना सहनशीलता (सहिष्णुता) अपनाने का विशेष आह्वान किया और लाखों पुरुषों, महिलाओं और बच्चों के हित में शान्ति बनाए रखने के साथ ही देश की एकता और अखण्डता के लिए अपनी शक्ति और ऊर्जा व्यय करने की अपील की। उनके आह्वान का लोगों के मस्तिष्क तथा हृदयों पर तत्काल वांछित प्रभाव पड़ा। एक गम्भीर समस्या का, न्यूनाधिक, तुरन्त समाधान हो गया।

स्वतंत्रता के साथ देश के समक्ष जिस प्रकार गम्भीर समस्याएँ थीं, जैसा कि हमने उल्लेख किया है; देश की एकता के निर्माण के साथ ही कानून और व्यवस्था बनाए रखने, सिविल सेवाओं के पुनर्गठन और देश को आन्तरिक-बाह्य राष्ट्रविरोधी तत्त्वों से सुरक्षित रखने जैसी चुनौतियाँ थीं। लेकिन, सरदार पटेल ने अपनी अद्वितीय व परिपक्व राष्ट्रीय राजनीतिक सोच और कार्यों में देश की एकता और व्यापक जनहित को सर्वोच्च रखते हुए उन सभी पर एक-एक करके विजय प्राप्त की; स्वयं अपने को एक युगपुरुष व महानतम भारतीय के रूप में स्थापित किया।

सरदार वल्लभभाई पटेल को लौह पुरुष के रूप में जाना जाता है। वास्तव में ही वे दृढ़निश्चयी, अदम्य साहस से भरपूर और विजयी प्रकृति वाले महा मानव थे। देश की एकता, अखण्डता, समृद्धि और सुरक्षा के लिए उन्होंने कई कठोर निर्णय भी लिए। लेकिन, उनकी किसी से कोई निजी शत्रुता नहीं थी; उन्हें किसी से व्यक्तिगत घृणा नहीं थी। मानव-प्रेम उनका मूल स्वभाव था, जो उनकी सहनशीलता (सहिष्णुता) का परिचायक था। यह उनका महान गुण था, जिसके बल पर वे भारत की अभूतपूर्व राष्ट्रीय एकता की स्थापना कर सके और देश को अनेक गम्भीर समस्याओं से सुरक्षित कर सके। सरदार पटेल के सत्तरवें निर्वाण दिवस पर उनके विचारों और कार्यों का स्मरण करते समय, उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए, उनकी सहनशीलता (सहिष्णुता) से भी परिचय होना चाहिए।

## शहीद

### व्यास मणि त्रिपाठी

देश की सीमाओं पर
लड़ने वाला
सरहद के रक्षार्थ
प्राणोत्सर्ग करने वाला
केवल एक सैनिक
शहीद नहीं होता
एक माँ का सपूत
पिता का वंशज
बहन का रक्षक
पत्नी का जीवनसाथी
और बच्चों का पिता
व सम्बंधों की माला में
पिरोया हुआ मनका
जिसके दामन की
डोर से बँधे होते हैं
असंख्य अहसास

अनगिनत जज़्बात 'औ' स्वप्न
जो टूट जाते तुरन्त
उस जाँबाज़ के न रहने पर
उजड़ जाता
पत्नी की माँग का सिंदूर
रूठ जाती माथे की बिंदिया
और काँच की चूड़ियाँ
उसे देख मुह बिचकातीं
उपहास-अट्टहास करतीं
राखी के दिन
पूजा की थाली लिए
बहन प्रतीक्षारत
प्रतीक्षा
जो कभी भी
नहीं होगी समाप्त
बच्चे शून्य नेत्रों से
एक-दूसरे को तकते
माँ की आखों से
अजस्र अश्रु बहते
विधवा पत्नी
अनाथ बच्चों
व माँ की हृदय-विदारक
चीत्कार को सुन
कलेजा मुँह को आता
और सब की ज़िन्दगी
जहन्नुम बन जाती.

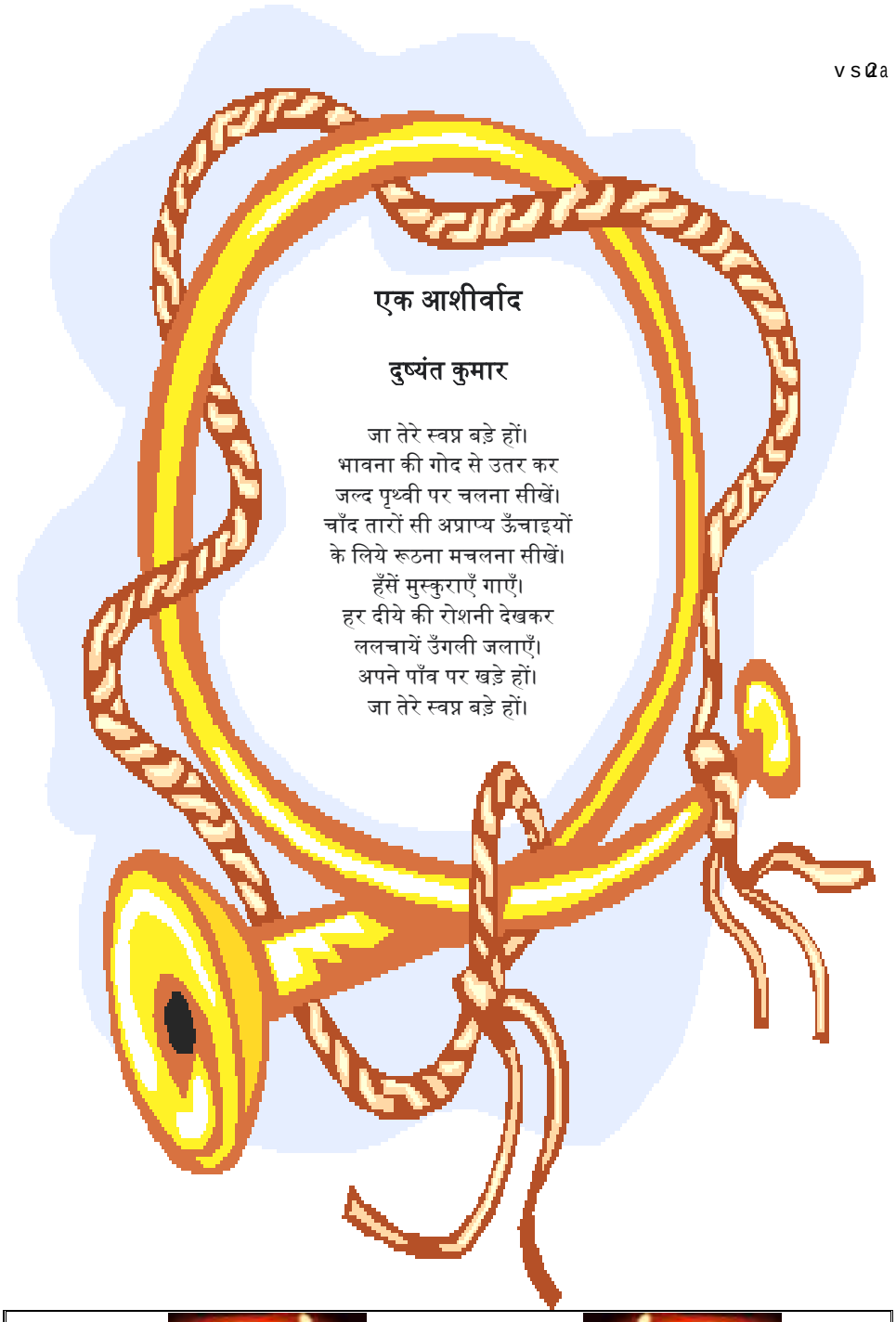

## एक आशीर्वाद

### दुष्यंत कुमार

जा तेरे स्वप्न बड़े हों।
भावना की गोद से उतर कर
जल्द पृथ्वी पर चलना सीखें।
चाँद तारों सी अप्राप्य ऊँचाइयों
के लिये रूठना मचलना सीखें।
हँसें मुस्कुराएँ गाएँ।
हर दीये की रोशनी देखकर
ललचायें उँगली जलाएँ।
अपने पाँव पर खड़े हों।
जा तेरे स्वप्न बड़े हों।

# एप्लीक्स

भावना सक्सैना

दी वह भूल गया है कि मैंने उससे नहीं उसके अंदर के भारत से विवाह किया था और अब जब ना वह भारत में है और न ही भारत उसमे बचा  है, तो मैं उसके साथ जी नहीं पा रही हूँ, उसके पास होने पर मेरा दम घुटता है... मैं तो उसकी सरलता पर, भारतीयता पर, उसके संस्कारों पर मुग्ध थी किन्तु वह हंस के पंख थे, धीरे धीरे उतर गए, उधार का जमा आखिर  कितने दिन चलता?  और अब जाना कि उसे बस विदेशी नागरिकता की लालसा मेरी ओर खींच लायी थी।

और देखो न दीदी अब हम दोनों एक दूसरे के होने की बजाय एक दूसरे के देश के हो गए, जानती हैं कल वह औपचारिक रूप से मेरे देश की नागरिकता पा लेगा, मुझे ऐसे किसी कागज की आवश्यकता नहीं जो यह कहे कि मैं भारत की हूँ, मैं तो मन से यहाँ की हूँ,  तन कहीं भी रहे, मुझे लौटकर यहीं आना होगा… मैं चाहूँ तो उसे रोक सकती हूँ, शिकायत कर सकती हूँ, लेकिन नहीं करूँगी, शायद एक दिन वह खुद समझ  जाए कि सुख भागने में नहीं अपनाने में है। मेरा मन दादर की गलियों, और तंग बस्तियों में उतना ही बसा है जितना पाँच सितारा होटलों में, जो गलियाँ आज उसे उबकाई देती हैं वह भूल गया है कि कभी उनसे रोज़ गुजरता था, जिन्हें आज वह ढकोसला और बेवकूफी कह गुजरता है, वही लाल मिर्च और नमक उसके ऊपर कितनी बार फिराया गया उसका हिसाब उसी ने मुझे दिया था, नौकरी न मिलने पर उसकी किस्मत की गाँठ भी झाड़ू खोलकर फेंकने पर खुली ग़ह भी उसी ने बताया था, फिर आज कैसे इतना सोफेस्टिकेटेड हो गया कि साबुन की बट्टी अनहाईजिनिक लगने लगी, और परिवार वाले गँवार, यह मैं समझ नहीं पा रही हूँ। गँवार तो वह स्वयं है जो इन सबका मोल नहीं आँक पाता।

आज जब सारा विश्व भारत को देख रहा है, भारत की संस्कृति को गुन रहा है क्यों आरिफ जैसे नौजवान पश्चिम की ओर रुख कर रहे हैं?

"दी आरम्भ से उसकी उत्कंठा, बच्चों-सी थी, कम समय में बहुत पाने के स्वप्न को वह छाती पे लगाए रखता था, उसकी टूटी-फूटी अँग्रेज़ी को मैं सुधारना नहीं चाहती थी, मैं उसकी हिन्दी पकड़ना चाहती थी। हिन्दी... वह भाषा जिसकी  मिठास मेरी पहली भारत यात्रा से ही मेरे कानों में रस घोलती रही, मेरे मन प्राण में बस गयी थी लेकिन वह तुला रहा डोंट वरी और आलराइट पर. उसका आलराईट ही सब रौंग कर गया....आप जरूर हँसोगी जब मैं आपको बताऊँगी कि हमारे प्रेमालाप के दौरान सबसे ज्यादा परेशानी मुझे डार्लिंग शब्द सुनकर होती रही, पर यह सब छोटी-छोटी बातें थी मुझे लगा समय के साथ वह मुझे समझ जाएगा, जान जायेगा कि उधार की संस्कृति में कोई सुख नहीं है, पर उसकी गुलाम मानसिकता को मैं नहीं सुधार पाई, पर हाँ! आज जब उसने भारतीयता को पूरी तरह छोड़ दिया तो मै भी स्वयं को उससे मुक्त कर आई हूँ। वर्ष भर पहले आपसे मिलकर जब दूसरी बार भारत आई तब एक योगाचार्य के आश्रम में छह माह का प्रशिक्षण लेना था, आश्रम के कार्यालय में मैनेजर पद पर नियुक्त आरिफ में मुझे सब गुण दिखे और मेरे न चाहते हुए भी हम एक दूसरे की ओर आकर्षित हो गए, प्रशिक्षण समाप्ति पर उसने विवाह प्रस्ताव रखा तो ना कहने का प्रश्न ही नहीं था, उसकी पारिवारिक स्थिति को मैं जानती थी पर आश्रम के आवास से संतुष्ट थी, बहुत ज्यादा तो कभी नहीं चाहा था इसीलिए भारत आते समय जब बॉस ने कहा कि छ: माह बाद मुझे वापस नहीं लिया जाएगा, तो मैं ने दूसरी बार सोचा तक नहीं......"

वह किसी जलधारा सी निर्बाध बहे जा रही थी और उसे सुनकर मैं अवाक थी, एक तो सुबह-सुबह बिन बादल बरसात-सा चले आना, तिस पर यह प्रवाह। उसे यूँ अचानक आया देखकर ही मै हैरान थी, दफ्तर पहुँची तो वह पहले से वहाँ मौजूद थी, लिफ्ट के बाहर चहलकदमी करते मिली और मुझे देखते ही बोली "क्या आपका कुछ समय मिलेगा"........

"पिछली बार से अब तक उसका हिन्दी उच्चारण काफी स्पष्ट हो गया था, थोड़ी भर आई देह पर हल्की गुलाबी सलवार कमीज़, ढीले बालों की चोटी, कलाई भर चूड़ियाँ और माँग भर सिंदूर, कोई उसे देख कर उसके जावानीज़ होने का अनुमान शायद ही लगा सके, हाँ नैन-नक्श भारत के पूर्वी क्षेत्र का होने का आभास अवश्य देते थे, हैरानी से मैं उसे देख रही थी और उसके अंदर के दर्द को महसूस कर रही थी, अपना भ्रम टूटने की वेदना सबसे तीव्र होती है, तभी तो मनुष्य अपना भ्रम बनाए रखने के लिए हर सम्भव प्रयास करता है।"

मुझे वो दिन याद हो आया जब यह तन्वंगी भारत सरकार के एक छात्रवृत्ति कार्यक्रम के अंतर्गत चार सप्ताह भारत में रहकर आई थी, यह उसकी पहली भारत यात्रा थी। मुंबई महासंचार के कार्यक्रम में न जाने ऐसा क्या था कि वापस लौटी तो सभी तार पूरी तरह भारत से जुड़ गए थे। वहाँ से वापिस आई तो कमरे में दाखिल होते ही कहा था – "नमस्ते दीदी, आप कैसे हैं?" मेरे चेहरे पर विस्मय भाव देख कर पूछ उठी थी, "मैंने सही बोला ना, मेरे दीदी कहने से आपको बुरा तो नहीं लगा".....हर शब्द नाप तोलकर सधा हुआ निकल रहा था। उसके भोलेपन पर मैं मुस्कुराई तो वह भी हँस पड़ी थी और थैंक यू बोलते-बोलते  सभी औपचारिकताओं को ताक पर रख मेरे गले आ लगी। भारत सरकार के इस मिशन में कार्य करते मुझे दो वर्ष हो चुके थे, छात्रवृत्ति विभाग का भार सँभालते अधिकांश प्रशिक्षार्थी संतुष्ट ही लौटते मिले थे,  हों भी क्यों न, जितनी राशि एक-एक प्रशिक्षणार्थी पर व्यय होती है, उतनी भारत के किसी भी साधारण मध्य-वर्गीय परिवार की जीवन भर की बचत भी नहीं हो पाती, खैर वह तो एक नितांत अलग चर्चा का विषय है, किंतु मेरा यह पहला अनुभव था जब कोई छात्रा आकर भावावेश में मुझसे यों लिपट गयी और धन्यवाद के बाद भीगी पलकों से अपनी भारत यात्रा के अनुभव बाँटने लगी। तब तक हिन्दी के दो चार शब्द ही बोल पाती थी, पर मेरे देश की प्रशंसा में उसके मुँह से फिरंगी भाषा में निकला एक-एक शब्द फूल-सा लग रहा था – "आई लव इंडिया दीदी, आई मिस इंडिया, आई हैव नो कम्प्लेंट्स, एवरीथिंग वॉज़ सो वंडरफुल, परफैक्ट, आई टोल्ड माई मॉम, आई वॉज इंडियन प्रिन्सैस इन्न माई प्रिवियस बर्थ, इन ओल्ड इंडिया...आई रियली फील आई बिलाँग देयर, इट्स माइ होम, आई ऑलरेडी स्टार्टेड कलेक्टिंग मनी, आई विल गो टू इंडिया अगेन, ऑन माई ओन (मुझे भारत बहुत पसंद आया, मुझे वहाँ की बहुत याद आ रही है, मुझे कोई शिकायत नहीं है, सब कुछ बहुत बढ़िया था, बिलकुल सही। मैंने अपनी माँ से कहा कि मैं शायद पिछले जन्म में भारत की राजकुमारी थी, मुझे लगता है वही मेरा सही स्थान है, वही मेरा घर है। मैंने अभी से पैसे इकट्ठे करने शुरू कर दिए हैं, फिर से ..... उसकी प्रतिक्रिया और भावावेग से मेरी आँखे नम तो हो आईं थीं, पर भीतर ही भीतर यह विचार था कि कुछ दिन में इसका यह आवेश स्वयं ही कम हो जाएगा, मेरे लिए तो एक अभ्यर्थी का प्रशिक्षण सफलतापूर्वक समाप्त हुआ और पूरक टिप्पणी के साथ फाइल बंद करने का समय था, अगली बार के वार्षिकोत्सव में उसकी प्रतिक्रिया अच्छी रहेगी, यह सोच नाम  नोट कर लिया था और उसे टालने के उद्देश्य से कहा लिंडसी पहले हिंदी सीख लो, हाँ कहकर वह चली गई, तब नहीं सोचा था कि वहाँ  से एक नई कहानी शुरू हो रही थी ।

फिर एक रोज़ जब कार्यालयी बाध्यताओं में उलझी हुई थी कि उसका फोन आया..."दीदी हिंदी सीख रही हूँ" मुझे अच्छा लगा सुनकर।

"बहुत अच्छा लिंडसी, कहाँ पर?"

"एक पंडित जी सिखाते हैं, दीदी मैं भारत जाने के लिए हिंदी सीख रही हूँ।"

"अच्छा जाओ तो मिलकर जाना कहते हुए मैंने बात समाप्त कर दी, चाहते हुए भी उसे ज्यादा समय नहीं दे पाई, एक रिपोर्ट उसी शाम प्रस्तुत करनी थी।"

साल भर बाद जब यह घटना लगभग भूल-सी गई थी कि अचानक एक दिन फिर आई और बोली - "दीदी मैं फिर से भारत जा रही हूँ।"

"कितने दिन के लिए?"

"पता नहीं दीदी, शायद वहीं रह जाऊँ, कहकर वह हँस दी थी"

मैं अवाक, कुछ कहते न बना, ऐसा मोहपाश... इस लड़की ने जैसे हतप्रभ करने का जिम्मा ले लिया था। और जाने क्यों मैंने उसे अपने भारत के कार्यालय का पता दे दिया था - "लिंडसी छह माह बाद मैं वापस भारत पहुँच जाऊँगी, यह मेरे कार्यालय का पता है, कुछ जरूरत हो तो सम्पर्क करना"... सोचा नहीं था वास्तव में उसकी आवश्यकता उपजेगी।

आज इस तरह उसे यूँ देख लगा शायद वह कृत्य भी ईश्वरीय योजना के तहत था, हम कितनी बार ना चाहते हुए कुछ कर जाते हैं, उसकी सार्थकता बाद में पता लगती है। ईश्वर ने शायद मेरे माध्यम से उसके आज की तैयारी की थी। अचानक तंद्रा टूटी...वह अपनी रौ में कहे जा रही थी...

"आप ज़रूर जानना चाहेंगी, अब मैं आपके पास क्यों आई हूँ,.....नहीं जानती आप मेरे बारे में क्या सोचती हैं पर इतना विश्वास है कि आप भारत में मेरे विश्वास को टूटने नहीं देंगी। सम्भव हो तो दो दिन आपके साथ रहना चाहती हूँ, अपने विश्वास को बनाए रखने के लिए..... अपने को तो मैं पा चुकी हूँ, उसे छोड़ना चाहती हूँ। मुम्बई में एक नौकरी मिल गयी है, फिर वहाँ चली जाऊँगी, मैं जानती हूँ आप मेरा विश्वास टूटने नहीं देंगी।"

ना कहने की सम्भावना ही नहीं थी, उसे घर का पता पकड़ाते माँ को फोन मिलाने लगी इस मुग्धा के आगमन की सूचना देने के लिए।

उसे ऑटोरिक्शा में बिठाकर वापस मुड़ते हुए यही सोच रही थी कि गलत कौन रहा है? कहीं स्वयं को भी दोषी पा रही थी जो एक ऐसे तंत्र का हिस्सा रही जो युवा विदेशी छात्रों को मेरे देश का सिर्फ रूपहला हिस्सा ही दिखाता है और गल-सड़ रही मानसिकता पर मखमली पैबंद लगा सुंदर "एप्लीक्स" के रूप में सजा देते हैं।

# साहित्य का लक्ष्य

**जैन राजेंद्र गुलेच्छा "राज"**

जो यथार्थ का करता चित्रण
वो साहित्य प्रखर होता है,
जिसमें सत्य का मिलता विवरण
वो साहित्य अमर होता है.

साहित्य जीवन का दर्पण है
जिंदगी के ढंग सिखाता है,
सुख दुःख करुणा प्रेम लाचारी
इन सबके रंग दिखाता है.

जो समाज को करता प्रेरित
वो साहित्य अनुपम होता है,
जो बदले जीवन की दिशा
वो साहित्य हृदयंगम होता है.

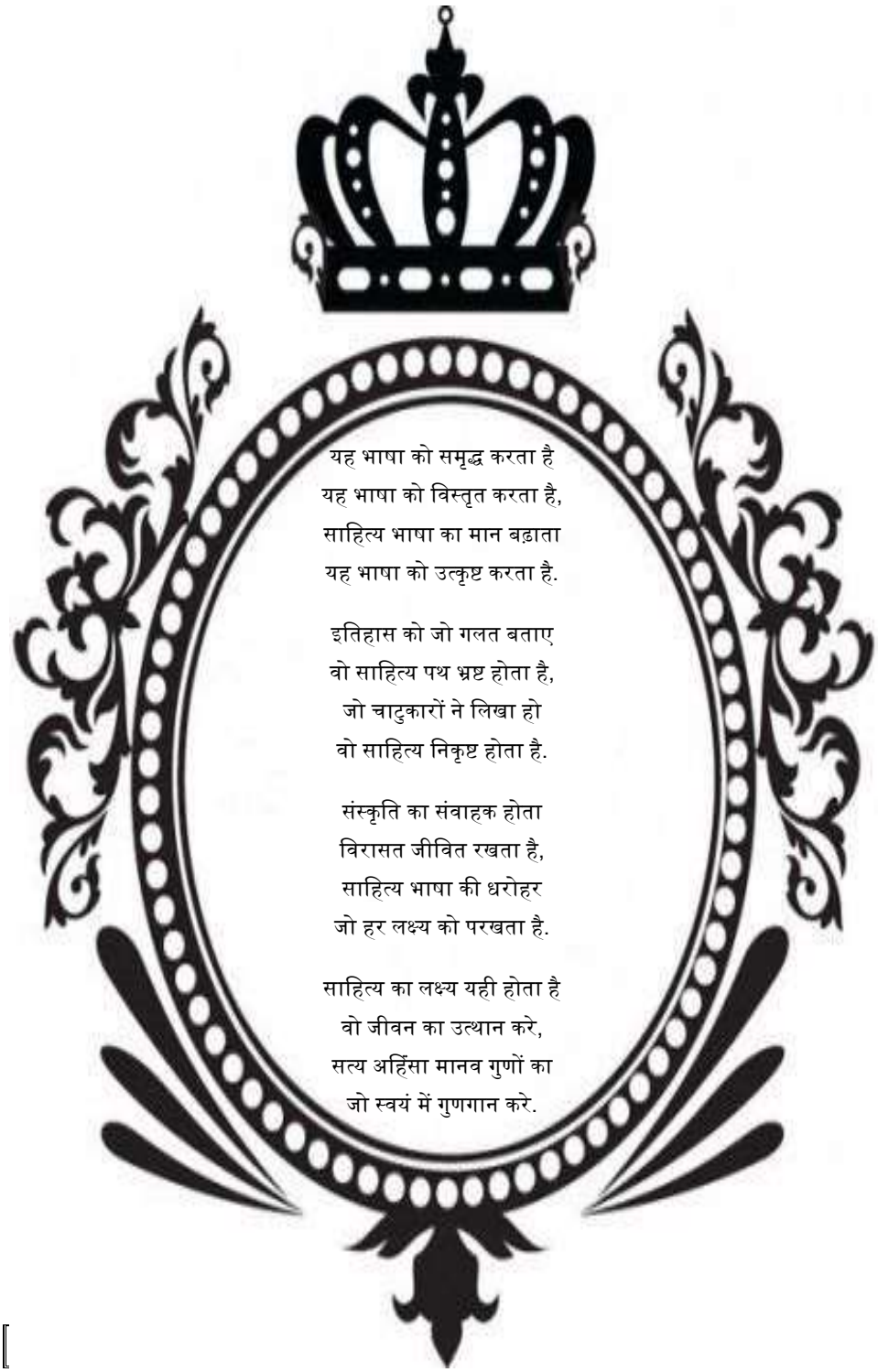

यह भाषा को समृद्ध करता है
यह भाषा को विस्तृत करता है,
साहित्य भाषा का मान बढ़ाता
यह भाषा को उत्कृष्ट करता है.

इतिहास को जो गलत बताए
वो साहित्य पथ भ्रष्ट होता है,
जो चाटुकारों ने लिखा हो
वो साहित्य निकृष्ट होता है.

संस्कृति का संवाहक होता
विरासत जीवित रखता है,
साहित्य भाषा की धरोहर
जो हर लक्ष्य को परखता है.

साहित्य का लक्ष्य यही होता है
वो जीवन का उत्थान करे,
सत्य अहिंसा मानव गुणों का
जो स्वयं में गुणगान करे.

# हेमिंग्वे साहब कह गए

प्रेरणा बिडालिया

हेमिंग्वे साहब कह गए,
दर्द के बारे में लिखो,
सच्चाई  के साथ.
मगर जो दर्द लफ़्ज़ों में बयान
हो जाए, क्या वो दर्द है?

दर्द की सच्चाई यह है,
कि वो बयान करने लायक
है ही नहीं.

दर्द, वो दर्द जिसे तुम,
सीने से लगाकर, रातों को सो जाते हो,
और फिर सवेरा होते ही, होश आते ही,
याद करते हो -
वो दर्द है, और है भी नहीं.

दर्द वो है जो इंसान को
एक मदहोशी में छोड़ जाए.

दर्द वो है जो बयान न हो,
मगर गहराई से देखने पर,
आँखों से छलक जाए.

दर्द वो है जो बातों के
बीच की ख़ामोशी में समा जाए.

हेमिंग्वे साहब कह गए,
दर्द के बारे में लिखो,
यदि ये सच है,
तो क्यों आज हाथ काँपते हैं?
दर्द का ज़िक्र आसान नहीं.

एक अजीब-सी ख़ामोशी है,
बातें हैं,
मगर उनका ज़िक्र करने वाले
लफ्ज़ नहीं.
अश्क पलकों पर आते हैं,
मगर छलकते नहीं.

सामने बैठकर भी,
पास होकर भी,
दूरियाँ मिटती नहीं.

सहमे हुए से कुछ लम्हे,
कल फिर शायद इस आज का शोक मनाएँगे,
और वो दर्द,
जिसका ज़िक्र हेमिंग्वे साहब कर गए,
उसको सोचकर फिर मुस्कुरायेंगे.

# राष्ट्रवाद के क्रांतिकारी पुरोधा एवं महायोगी : अरविंद घोष

**सन्तोष खन्ना**

समूचे विश्व में भारत ही एक ऐसा महान राष्ट्र है जहाँ समय-समय पर ना केवल ईश्वर स्वयं कई अवतारों में प्रकट हुए हैं बल्कि अनेकानेक महान विभूतियों ने इस धरा को अध्यात्म और अन्य महत्वपूर्ण अवदान से आप्लावित किया है। महायोगी अरविंद घोष ने भी अपने जीवन में कई प्रकार के अवदान से इन महान विभूतियों में अग्रिम पंक्ति में अपना सर्वोच्च स्थान बनाया है। आध्यात्मिक जगत में प्रवेश से पहले अरविंद घोष राष्ट्रभक्ति के कई कीर्तिमान बना चुके थे । बंग भंग आंदोलन काल में वह राजनीति में आए और तत्पश्चात् महा समाधि की ओर अग्रसर होने तक उन्होंने देश की स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए स्वयं को समर्पित कर दिया ।अँग्रेज शासन के विरोध स्वरूप उन्हें कारागार में यातनाओं का दंश सहना पड़ा और जब वह कारागार से ससम्मान मुक्त कर दिए गए तो वह एक सर्व सम्मानित और सर्वाधिक लोकप्रिय नेता बन चुके थे।

इंग्लैंड से पढ़ाई कर जैसे ही उन्होंने भारत भूमि पर पैर रखा उन्हें मातृभूमि का मातृशक्ति के रूप में अनोखा अहसास हुआ और यह अहसास उन्हें जीवन पर्यन्त बना रहा। उन्होंने स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये जो अथक प्रयास किये, वहीं अहसास उनका प्रेरणास्रोत्र बना रहा। 'भवानी मंदिर की स्थापना के पीछे यही प्रेरणा रही।' स्वतंत्रता संग्राम के दौरान गाँधी जी के नेतृत्व में काँग्रेस द्वारा जो प्रयास किये गये, वह सब अरविंद घोष राजनेता के रूप में कर चुके थे। राजनेता के रूप में उन्होंने पूर्ण स्वराज्य की माँग की थी गाँधीजी के दक्षिण अफ्रीका से वापस आने से बहुत पहले ही वह असहयोग आंदोलन का सूत्रपात कर चुके थे । कोलकाता में वह नेशनल कॉलेज में प्रिंसिपल के रूप में एक नई शिक्षा पद्धति की बात कह चुके थे। वंदे मातरम और कर्म योगी के सम्पादक के रूप में भारतीय आत्मा को स्पष्ट करने वाली नई पत्रकारिता का भी सूत्रपात पूर्ण किया था। वामपंथी विचारधारा को स्वीकार करते हुए भी विरोधी के प्रति कभी असहिष्णुता कभी नहीं रखी। कह सकते हैं कि स्वतंत्रता पूर्व भारतीय राजनीति के सभी मूलभूत आदर्श राष्ट्रीयता, स्वदेश प्रेम, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, जन संगठन और राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का आग्रह जैसे तत्व गाँधी जी के नेतृत्व में काँग्रेस ने जो अपनाये, वह श्री अरविंद जैसे महान व्यक्ति की देन हैं । श्री जवाहरलाल नेहरू ने ठीक ही लिखा है कि ' बंग भंग आंदोलन ने अपने सभी सिद्धांत और उद्देश्य श्री अरविन्द से प्राप्त किये और इसने महात्मा गाँधी के नेतृत्व में होने वाले आंदोलन का आधार बनाया।'

अरविंद का जन्म १५ अगस्त, १८७२ को कलकत्ता में हुआ। उनके पिता का नाम डॉ. कृष्णधन घोष और माता का नाम स्वर्णलता था। स्वर्णलता उस समय के एक प्रसिद्ध देशभक्त हिंदू धर्म के लिये सक्रिय नेता राजनारायण बाबू की बेटी थी जबकि डॉ. कृष्णधन घोष अँग्रेजी शिक्षा और अँग्रेजी जीवन शैली पर बुरी तरह लट्टू थे। वह अपनी संतान को उसी शैली में ढालना चाहते थे। उन्होंने डॉक्टरी की पढ़ाई भारत में की थी और डॉक्टरी की अगली पढ़ाई अर्थात् एम.डी. इंग्लैंड से की और जब वह वापस आये तो पूरी तरह अँग्रेजियत अपना चुके थे। वह अपनी संतान को भी वैसा ही बनाना चाहते थे। इसलिए सर्वप्रथम, उन्होंने पाँच वर्ष के अरविंद को दार्जिलिंग के उस लोरेटो कॉन्वेंट स्कूल में दाखिल किया जो अँग्रेजों के बच्चों की पढ़ाई के लिये स्थापित किया गया था। सात वर्ष की आयु में अरविंद को उनके दो अन्य भाईयों के साथ वह उन्हें शिक्षा के लिए इंग्लैंड में छोड़ आये। वहाँ वह उन्हें एक पादरी के सपूर्द इस हिदायत के साथ कर आये कि उन्हें किसी भारतीय से न मिलने दिया जाये।

अरविंद और उनके भाईयों के शिक्षा के वर्ष बहुत कठिनाई में बीते क्योंकि डॉ. कृष्ण धन घोष पहले तो पढ़ाई के लिये उन्हें पैसे भेजते थे किंतु बाद में उन्होंने पैसा भेजना बंद कर दिया। अरविंद पढ़ाई बहुत मेहनत से करते थे और उन्हें अपनी अँग्रेजी दक्षता और साहित्यिक योग्यता के लिये अनेक विश्वविद्यालयीय पुरस्कार मिले। अरविंद ने अपनी पढ़ाई सेंट पाल से की और फिर वर्ष १८९० में उन्हें कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में दाखिला मिल गया। वहीं उन्होंने आइ.सी.एस प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी की और उस परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। यहीं नहीं, उन्होंने अपनी फाइनल परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त की। आई.सी.एस. की प्रतियोगी परीक्षा में वह ग्यारवें नम्बर पर थे परंतु उन्होंने जानबूझ कर धुडसवारी की परीक्षा नहीं दी। उन्हें बाद में धुडसवारी परीक्षा के दो और अवसर दिये गये परंतु उन्होंने उन में भी जानबूझ कर हिस्सा नहीं लिया।

उनके पिता डॉक्टर घोष यह समझते थे कि अरविंद आई. सी. एस . परीक्षा पास कर चुके हैं। वह उनका बड़ी उत्सुकता से इंतजार कर रहे थे और इसके लिये उन्होंने एक महीने की छुट्टी ले रखी थी ताकि वह बम्बई जा कर अपने आई.सी.एस. बेटे को लिवा लाना चाहते थे। ध्यातव्य है कि जब तक डॉ कृष्णघन घोष का अँग्रेजी सरकार से और अँग्रेजी रहन-सहन सहन से पूरी तरह मोह भंग हो चुका था।

जिस जहाज से अरविंद आने वाले थे पता चला कि वह डूब गया है और उन्होंने विश्वास कर लिया कि अरविंद उसी जहाज में डूब गए होंगे। इससे उनको बहुत बड़ा धक्का लगा और उसकी मृत्यु की खबर सुनकर वह बहुत बीमार हो गए और इस प्रकार उस बीमारी में उनकी मृत्यु हो गई। मरते वक्त उनके होंठों पर केवल अरविंद का नाम था।

अरविंद वापस भारत आ कर बड़ोदा के महाराजा सियाजी गायकवाड़ के यहाँ कार्य करने लगे। वहाँ कई प्रकार के कार्य करते-करते अंततः वह प्रिंसिपल तक बन गये। १९०१ में उन्होंने मृणालिनी से विवाह किया। अध्ययन और अध्यापन के साथ उनके जीवन में दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होने लगी, एक, उन का देश की दयनीय स्थिति की ओर ध्यान केंद्रित होने लगा और बंग भंग आंदोलन के समय तक वह राष्ट्रीय राजनीति में पूरी तरह कूद पड़े। दूसरा, आध्यात्मिकता की ओर बढ़ती प्रवृत्ति और बाद में वह राजनीति छोड़ पांडुचेरी चले गए जहाँ उन्होंने अरविंद आश्रम बनाया और आध्यात्म के क्षेत्र में एक नूतन दर्शन का सूत्रपात किया और उसका प्रतिपादन किया।

Commented [DST3]:

उन्होंने बड़ोदा के कॉलेज में अच्छे खासे वेतन को छोड़ कर कलकत्ता में नेशनल कालेज में मात्र १२५/- पर अध्यापन कार्य शुरू इसलिए किया वह यहाँ कलकत्ता से राष्ट्रवादी गतिविधियों का जोर-शोर से संचालन कर सकें। उन्होंने वंदेमातरम् पत्रिका में अपने राष्ट्रवादी विचारों को प्रतिपादित करना आरम्भ किया और थोड़े समय में ही यह अखिल भारतीय स्तर का पत्र बन गया। अरविंद ने इसमें पूर्ण स्वराज्य की खुली धोषणा की। उनका कहना था कि 'प्राचीन भारतीय जीवन की आधुनिक परिस्थितियों में चरितार्थता पाने के लिए राष्ट्रीय महता के सतयुग की पुनरावृत्ति के लिए भारत को पुनः विश्व के गुरु और निर्देशक की हैसियत से कार्य करने के लिए और अंत में वेदान्तिक आदर्श क्षमता को राजनीति में उतार कर जनता को व्यक्तिगत स्वतंत्रता और क्षमता दिलाने के लिए भारत को पूर्ण स्वराज्य चाहिए ही।' वंदेमातरम् में अपने क्रांतिकारी विचारों के कारण अरविंद को १९ अगस्त, १९०७ को गिरफ्तार कर लिया गया। कुछ दिनों बाद उनको छोड़ दिया गया। स्वतंत्रता संग्राम सम्बंधित उनकी गतिविधियों में बराबर तेजी आती जा रही थी। इस बीच मुज्जफरपुर के जिलाधीश किंग्सफोर्ड को बम से उड़ा देने की मंशा से खुदीराम बोस ने एक और लड़के के साथ मिल कर एक घोड़ागाड़ी पर बम फेंका। उसमें

किंग्सफोर्ड तो नहीं थे किंतु उसमें दो निरपराध  महिलाएँ मारी गईं। इस सिलसिले में कई क्रांतिकारी पकड़ लिए गये। । इस मामले में श्री अरविन्द भी गिरफ्तार कर लिए गये और उन्हें अलीपुर जेल में एक वर्ष के लिए भेज दिया गया। इस जेल में रह कर अरविंद ने अपना पूरा ध्यान साधना करने पर लगा दिया और कारावास के दौरान उन्हें अनोखी आध्यात्मिक अनुभूतियाँ हुईं जिन्होंने उनका सक्रिय राजनीति से रास्ता ही अलग कर दिया। उनके जीवन का यह सबसे बड़ा मोड़ था । जेल में रह कर उन्हें ईश्वरीय आदेश था कि वह अब आध्यात्मिक रास्ते को अपना कर सम्पूर्ण विश्व कल्याण में जुट जायें। इस सम्बंध में अरविंद ने लिखा है कि 'मैंने इसलिए राजनीति नहीं छोड़ी कि मैं निराश हो चुका था कि मैं कुछ नहीं कर पाऊँगा । यह धारणा  ही मेरे स्वभाव के प्रतिकूल है । मैं यहाँ इसलिए आया कि मैं अपनी साधना में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं चाहता था । इस विषय में मुझे स्पष्ट आदेश मिला था । अतः  मैंने राजनीति से पूर्णतया सम्बंध विच्छेद कर लिया क्योंकि मैं जानता हूँ कि मैंने जो कार्य किया है और जो रास्ते बताए हैं उन पर चलते हुए दूसरों द्वारा उसकी सफलता नियत है । मैंने जिस आंदोलन का सूत्रपात किया है वह बिना मेरी वैयक्तिक उपस्थिति के भी पूरा होकर रहेगा । मेरे राजनीति से हटने के पीछे ना तो निराशा थी और ना ही असफलता।'

साधना के लिए वह अब किसी एकान्त स्थान पर जाना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने पांडुचेरी को चुना। उन दिनों पांडुचेरी को मृत शहर कहा जाता था और अरविंद ने इसे अपनी साधना-स्थली के रूप में चुन कर उसे कुछ वर्षों में एक अत्यंत जीवंत शहर बना दिया न केवल आध्यात्मिक धरातल पर बल्कि भौतिक धरातल पर भी। वर्तमान में पांडुचेरी का क्या जलवा है वहाँ जाये बिना उसकी महिमा और गरिमा को नहीं समझा जा सकता।

अरविंद महायोगी तो बने साथ ही वह एक महान साहित्यकार भी हैं और उनका साहित्य अँग्रेजी भाषा में रचित है। उनके विपुल साहित्य का उल्लेख करते समय उनका अँग्रेजी में रचित महाकाव्य सावित्री विश्व के महाकाव्यों में सर्वोत्कृष्ट माना जाता है। अँग्रेजी में शेक्सपियर ने अमर नाटक लिखे हैं, जान मिल्टिन का पैराडाइज लास्ट महाकाव्य हो या शैली का प्रोमीथियस अनबांउड हो या अँग्रेजी में रचित कोई और महाकाव्य हो, अरविंद के सावित्री महाकाव्य के सामने कहीं नहीं ठहरते। सावित्री महाकाव्य में सावित्री सत्यवान के कथासूत्र को लिया गया है जिसमें सावित्री अपने मृत पति सत्यवान को धर्मराज से जीवनदान दिलाती है। सावित्री सत्यवान के कथासूत्र को लेकर लिखा गया यह आध्यात्मिक महाकाव्य एक ऐसी बेजोड़ रचना है जिसका हिंदी-उर्दू में अनुवाद करने के लिए अनुवादक अपना पूरा जीवन लगा देता है पर फिर भी कहने को बहुत कुछ शेष रह जाता है क्योंकि अरविंद ने अपने कल्पना के बल पर नहीं अपितु अपनी साधना के आधार पर इस तथा अपनी साहित्यिक कृतियों की रचना की है क्योंकि वह मनुष्य की अतिमानसिकता (super mind) को महत्व देते हैं जो उनके दर्शन का प्रमुख तत्व है। यदि अरविंद ने सावित्री महाकाव्य हिंदी या बंगला मे रचा होता तो वह भी रामचरितमानस महाकाव्य - सा लोकप्रिय होता ।

महाकवि योगी अरविंद ५ दिसम्बर, १९५० को निर्वाण को प्राप्त हुए थे अर्थात् भारत की स्वतन्त्रता के लिये अथक प्रयास करने वाले इस सेनानी के जीवनकाल में देश स्वतंत्र हो गया था। देश १५अगस्त को स्वतंत्र हुआ और अरविंद का जन्म भी १५ अगस्त को हुआ था। भारत की स्वतंत्रता के अवसर पर ऑल इंडिया रेडियो से उनका संदेश प्रसारित हुआ जिसमे उन्होंने कहा कि '१५ अगस्त मेरा जन्मदिन है यह मेरे लिए कृतज्ञता स्वीकार का दिन है कि इस तिथि  को ऐसा व्यापक महत्व प्रदान किया गया । मैं इसे आकस्मिकता न मान कर  ईश्वरीय  शक्ति के विधान को मुद्रांकित प्रामाणिकता कहना चाहता हूँ जिस के निर्देश पर मैंने अपने कार्यों को शुरू किया था, यह उन्हीं कार्यों की सफलता की शुरुआत है।'

# कोख का बँटवारा

**अंकुर सिंह**

रामनरायण के दो बेटों का नाम रमेश और सुरेश है। युवा अवस्था में रामनारायण के मृत्यु होने के बाद उनकी पत्नी रमादेवी ने रामनारायण के जमा पूँजी और पूर्वजों से मिली सम्पत्ति से दोनों बेटों का परिवरिश किया। रमादेवी का बड़ा बेटा रमेश पढ़ लिखकर शहर में सरकारी विभाग पर बड़े बाबू के पद पर आसीन हुआ तो छोटा बेटा सुरेश गाँव में ही खेतीबाड़ी सहित अन्य सामाजिक कार्य करने लगा। एक भाई शहर में, तो दूसरा गाँव में अपने परिवार के साथ रहने लगा। रमादेवी अपने छोटे बेटे सुरेश के साथ गाँव में ही रहती थी। रमेश और सुरेश दोनों के रिश्ते सामान्य थे तथा दोनों एक दूसरे की भावनाओं का पूरा सम्मान करते थे। सुरेश कभी अपने बड़े भाई के सामने ऊँची आवाज में बात नहीं करता।

खैर दोनों भाई अपने-अपने तरीके से अपने परिवार के पालन-पोषण में लगे रहे और दोनों के बच्चे पढ़-लिखकर शहर में नौकरी करने लगे। कुछ दिनों बाद रमेश भी रिटायर हो सरकारी विभाग से पेंशन पाने लगा और सुरेश गाँव में ही रमेश से साथ आपसी रजामंदी से हुए बँटवारे में मिली अपने हिस्से की जमीन पर धन अर्जन का साधन बना अपना जीवन बिताने लगा।

कुछ सालों बाद अचानक एक दिन सुरेश को करोड़ों रुपए की लाटरी लग गई। ये बात जब रमेश को पता चला तो वह छोटे भाई के बदलते हालात देख बड़ा खुश हुआ, पर रमेश के बीवी और बच्चों को सुरेश के परिवार की ये खुशी फूटी आँखों नही सुहाई और रमेश की बीवी, बच्चे रमेश को ताने देने लगे और सुरेश के साथ हुए बँटवारे को न मानने और उसपर सुरेश के द्वारा बनाई गई सम्पत्ति में हिस्सेदारी माँगने के साथ जयजाद के पुनः बँटवारे की बात को कहने लगे। पहले तो रमेश अपने बीवी बच्चों की बात नजरंदाज करता रहा। लेकिन आखिर में रमेश पर ये कहावत चरितार्थ हुई कि "जो किसी के सामने नहीं झुकता उसे उसके अपने झुका देते है।" अंततः रमेश भी अपने परिवार के दबाव में आ छोटे भाई सुरेश के साथ पूर्व में आपसी रजामंदी से हुए बँटवारे को ना मानते हुए उस पर सुरेश द्वारा बनाई गए चीजों में हिस्सा माँगने लगा। ये देख सुरेश ने रमेश से कहा, भैया जैसे आपने अपने पूरे जीवन में नौकरी किया और अब आप सरकार से मिलने वाली लाखों रुपए के पेंशन के हकदार बने, वैसे मैंने भी अपना पूरा जीवन आपसी सहमति से हुए बँटवारे से अपने हिस्से में मिली जमीन पर इन चीजों का निर्माण करने में लगा दिया ताकि इसके होने वाले दो रुपए के आमदनी से मैं अपना जीवन बीता सकूँ। रमेश की अंतरात्मा तो सुरेश के इन बातों को सही बता रही थी। पर बीवी और बच्चों के जिद्द के कारण रमेश इसे सहर्ष स्वीकार नहीं कर पा रहा था और पूर्व में हुए बटवारे को मानने को तैयार नहीं हो रहा था। सुरेश भी अपनी कही बातों को बार-बार दुहराये जा रहा था। धीरे-धीरे इन बातों का सिलसिला बहस और झगड़े का रूप ले तेज ऊँची आवाज के साथ पूरे कमरे में गूँजने लगी।

होते शोर के बीच कमरे में एक किनारे बैठी इनकी माँ रमादेवी अपनी नम्र आँखों से ऊपर छत की तरफ देखते हुए ईश्वर से कह उठी, "हे! ईश्वर, ये तू सम्पत्ति का बँटवारा नहीं करवा रहा बल्कि मेरी कोख का बँटवारा करवा रहा है ।"

## क्या मैं पत्थर हो चुका हूँ ?

### मनीष कुमार गुप्ता

फैली है काल की लहरी
हर आँख है, दु:ख में गहरी
क्यों सम्वेदनाएँ मेरी
हो चुकी हैं इतनी बहरी
सुनाई इन्हें कुछ न देता
क्या मैं पत्थर हो चुका हूँ?

विकट वक़्त घिरा रोने का
बरबस आँख भिगोने का
रचा रखा मैंने फिर क्यों
स्वांग निर्मोही होने का
टाल कर सब कुछ होनी पर
क्या मैं पत्थर हो चुका हूँ?

माना मौत मुअय्यन लेकिन
बस में केवल जीवन के दिन
कैसे बिताएँ इनको पर
अपनों के अपनत्व के बिन
बुनियादी बातें बिसरा कर
क्या मैं पत्थर हो चुका हूँ?

थमता नहीं है दिल का शोर
ज़मीर भी मारता है ज़ोर
किसी दिन पकड़ा जाएगा
कब तक छुपेगा मन का चोर
मुखौटे में छुपा हुआ मैं
क्या मैं पत्थर हो चुका हूँ?

इंसानी दर्द से मैं हारा
यहीं पर अपनी जीवन धारा
सुख से साँसे पूरी कर लें
पास रखो अध्यात्म तुम्हारा
अब खुल कर जी भर रोने दो
क्या मैं पत्थर हो चुका हूँ!

# घर की ऊर्जा

**समीर उपाध्याय**

भोगीलाल बहुत बड़े व्यापारी थे। कारोबार अच्छा-खासा चल रहा था। आलीशान मकान था। एक बहुत बड़ी बैठक और पाँच शयनकक्ष।

परिवार में अस्सी वर्ष की वृद्ध माँ, पत्नी, दो जवान बेटे और एक बेटी। माँ गैरेज में पड़ी खटिया पर लेटी अपनी जिंदगी के बाकी दिन गिन रही थी।

समय के बीतते कारोबार में मुनाफा कम होता गया। पत्नी की बीमारी के लिए बहुत पैसे खर्च होने लगे। बीमारी पकड़ी नहीं जा रही थी। जवान बेटों की शादी की बात बन नहीं पा रही थी। कभी-कभी बाप-बेटे के बीच छोटे-मोटे झगड़े हो जाते थे।

भोगीलाल ने अपनी व्यथा मित्र चमनलाल को सुनाई। चमनलाल ने सलाह दी कि किसी अच्छे वास्तुशास्त्री को बताओ। शायद घर में कोई वास्तुदोष हो। चमनलाल की सलाह मानकर उसने एक बहुत बड़े वास्तुशास्त्री को बुलाया। वास्तुशास्त्री ने पूरे घर के भीतर-बाहर चक्कर लगाया और बताया कि वैसे तो आपके मकान का प्लान वास्तु के अनुसार ही है। आपके मकान में सिर्फ एक ही दोष है। भोगीलाल ने पूछा - "पंडितजी! बताइए कि इस दोष का निवारण कैसे किया जाए?"

वास्तुशास्त्री ने कहा - "आपके घर में उर्जा की कमी है।"

भोगीलाल ने पूछा - "उर्जा लाने के लिए क्या किया जाए?"

वास्तुशास्त्री ने कहा - "ईश्वर सभी जगह नहीं पहुँच पाते। इसलिए उसने बनाई है माँ। माँ ईश्वर का साक्षात सदेह रूप है। आपने पत्थर की मूर्ति को पूजा-स्थान में स्थापित किया है, किन्तु साक्षात सदेह रूप ईश्वर को गैरेज में स्थान दिया है। माँ घर की उर्जा होती है। घर की उर्जा को आपने घर के बाहर रखा है। माँ घर की रोशनी होती है। अब आप ही बताइए कि माँ के बिना घर में उजाला कैसे होगा? आपको घर के प्लान को बदलने की या किसी विधि-विधान करने की जरूरत नहीं है। बस, घर की उर्जा को घर के भीतर स्थान दे दें। उनके आशीर्वाद से सारी आपदाएँ अपने-आप हल हो जाएगी।"

वास्तुशास्त्री को सुनकर भोगीलाल अवाक रह गए।

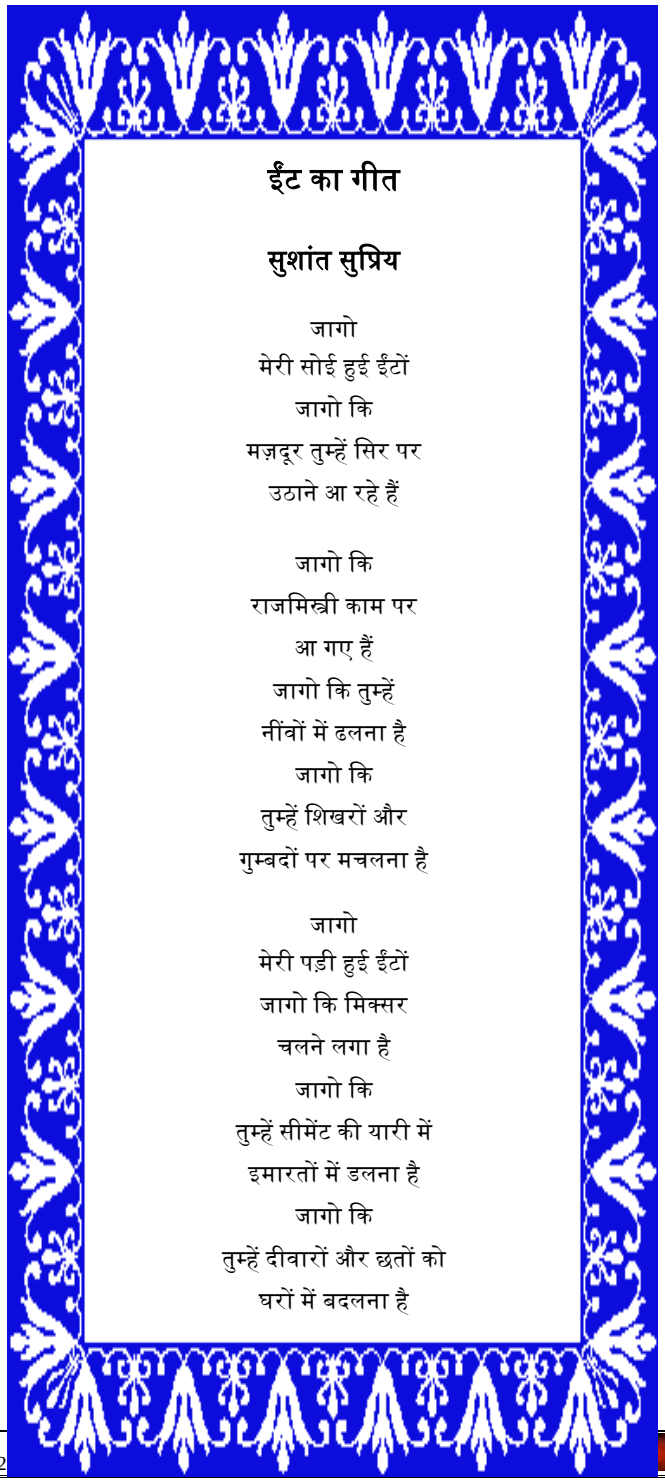

# ईंट का गीत

## सुशांत सुप्रिय

जागो
मेरी सोई हुई ईंटों
जागो कि
मज़दूर तुम्हें सिर पर
उठाने आ रहे हैं

जागो कि
राजमिस्त्री काम पर
आ गए हैं
जागो कि तुम्हें
नींवों में ढलना है
जागो कि
तुम्हें शिखरों और
गुम्बदों पर मचलना है

जागो
मेरी पड़ी हुई ईंटों
जागो कि मिक्सर
चलने लगा है
जागो कि
तुम्हें सीमेंट की यारी में
इमारतों में ढलना है
जागो कि
तुम्हें दीवारों और छतों को
घरों में बदलना है

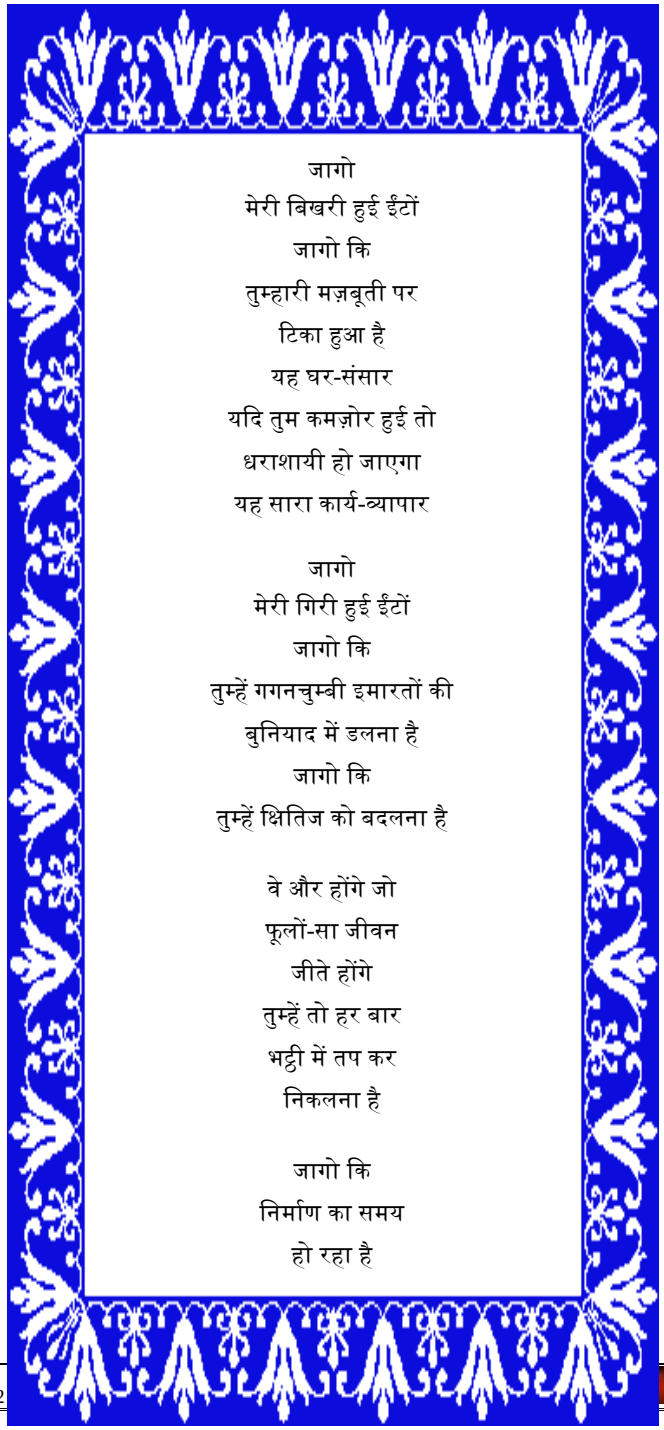

जागो
मेरी बिखरी हुई ईंटों
जागो कि
तुम्हारी मज़बूती पर
टिका हुआ है
यह घर-संसार
यदि तुम कमज़ोर हुई तो
धराशायी हो जाएगा
यह सारा कार्य-व्यापार

जागो
मेरी गिरी हुई ईंटों
जागो कि
तुम्हें गगनचुम्बी इमारतों की
बुनियाद में ढलना है
जागो कि
तुम्हें क्षितिज को बदलना है

वे और होंगे जो
फूलों-सा जीवन
जीते होंगे
तुम्हें तो हर बार
भट्ठी में तप कर
निकलना है

जागो कि
निर्माण का समय
हो रहा है

# बुद्ध

**मुन्ना कुमार सिंह**

बौद्ध धर्म के बारे में स्नातक में पढ़ा मगर बुद्ध से परिचय तो हमेशा रहा। गया राजगीर नालंदा वैशाली केसरिया लौरिया सब हमारे बिहार राज्य में है. इनमें कई तो घर के आस पास ही हैं।

बचपन में ही वह कविता भी पढ़ी थी :

*कोई निरपराध को मारे तो क्यों न अन्य उसे उबारें?

रक्षक पर भक्षक को वारे, न्याय दया का दानी।"

"न्याय दया का दानी! तूने गुणी कहानी।"

- मैथिलीशरण गुप्त*

जिसे बुद्ध बेटे राहुल के बचपन से जोड़ कर ही अर्थ समझाया था मास्साहब ने।

बोध गया में बहुत साल गुज़ारा। तक़रीबन रोज उस पीपल वृक्ष के नीचे बैठा - बुद्ध से आत्मसाक्षात्कार हेतु। क्या पाया वो तो गूँगे का गुड है खाया, चुभलाया और मुस्कुराया।

बताएँ कैसे ?

मैं फ़ल्गु नदी पार कर डूंगेश्वरी की गुफ़ा भी गया जहाँ बुद्ध ने लम्बी तपस्या कर अपने शरीर को क्षीण कर लिया था, वहीं चरवाहिन युवती सुजाता ने उन्हें खीर खिला मध्यम मार्ग की शिक्षा दी।

मेरे दर्शन शास्त्र के गुरुजी ने बौद्ध धर्म को बड़े साधारण गणित में समझाया -

४, ८ और १२

बस 'बुद्धिज्म' समझ लो तीन संख्या में !

ये भी कोई बात हुई ?

बोर्ड पर इतना लिख दिया और चले गए।

समय लगा इन संख्याओं के गूढ़ार्थ को जानने में।

पहले चार - बुद्ध के ४ आर्य सत्य

इस प्रकार हैं :- 'दुःखसमुदायनिरोधमार्गाश्चत्वारआर्यबुद्धस्याभिमतानि तत्त्वानि।' अर्थात् -

* (१) दुःख : संसार में दुःख है,

* (२) समुदय दुःख के कारण हैं,

* (३) निरोध : दुःख के निवारण हैं,

* (४) मार्ग : निवारण के लिये अष्टांगि

बुद्धाभिमत इन चारों तत्त्वों में से दुःखसमुदाय के अन्तर्गत द्वादशनिदान

१. जरामरण, २. जाति, ३. भव, ४. उपादान, ५. तृष्णा, ६. वेदना, ७. स्पर्श, ८. षडायतन, ९. नामरूप, १०. विज्ञान, ११. संस्कार, १२. अविद्या, तथा दुःखनिरोध के उपायों में अष्टांगमार्ग -

१. सम्यक् दृष्टि, २. सम्यक् संकल्प, ३. सम्यक् वाणी, ४. सम्यक् कर्म, ५. सम्यक् आजीव, ६. सम्यक् व्यायाम, ७. सम्यक् स्मृति, ८. सम्यक् समाधि ।

दु:ख को हरने वाले या तृष्णा का नाश करने वाले अष्टांगिक मार्गों को मध्यम मार्ग कहते हैं ।

'दु:ख से मुक्ति' बौद्ध धर्म का सदा से मुख्य ध्येय रहा है। कर्म, ध्यान एवं प्रज्ञा इसके साधन रहे हैं।

बुद्ध के क्षणिकवाद, अनीश्वरवाद, प्रतीत्यसमुत्पाद, शून्यवाद ।

बुद्ध के उपदेश तीन पिटकों में संकलित हैं। ये सुत्त पिटक, विनय पिटक और अभिधम्म पिटक कहलाते हैं। ये पिटक बौद्ध धर्म के आगम हैं। क्रियाशील सत्य की धारणा बौद्ध मत की मौलिक विशेषता है। उपनिषदों का ब्रह्म अचल और अपरिवर्तनशील है। बुद्ध के अनुसार परिवर्तन ही सत्य है। पश्चिमी दर्शन में हैराक्लाइटस और बर्गसाँ ने भी परिवर्तन को सत्य माना। इस परिवर्तन का कोई अपरिवर्तनीय आधार भी नहीं है। बाह्य और आंतरिक जगत् में कोई ध्रुव सत्य नहीं है। बाह्य पदार्थ "स्वलक्षणों" के संघात हैं। आत्मा भी मनोभावों और विज्ञानों की धारा है। इस प्रकार बौद्धमत में उपनिषदों के आत्मवाद का खंडन करके "अनात्मवाद" की स्थापना की गई है। फिर भी बौद्धमत में कर्म और पुनर्जन्म मान्य हैं। आत्मा का न मानने पर भी बौद्धधर्म करुणा से ओतप्रोत हैं। दु:ख से द्रवित होकर ही बुद्ध ने सन्यास लिया और दु:ख के निरोध का उपाय खोजा। अविद्या, तृष्णा आदि में दु:ख का कारण खोजकर उन्होंने इनके उच्छेद को निर्वाण का मार्ग बताया।

अनात्मवादी होने के कारण बौद्ध धर्म का वेदांत से विरोध हुआ। इस विरोध का फल यह हुआ कि बौद्ध धर्म को भारत से निर्वासित होना पड़ा। किन्तु एशिया के पूर्वी देशों में उसका प्रचार हुआ। बुद्ध के अनुयायियों में मतभेद के कारण कई सम्प्रदाय बन गए।

सिद्धांतभेद के अनुसार बौद्ध परम्परा में चार दर्शन प्रसिद्ध हैं। इनमें वैभाषिक और सौत्रांतिक मत हीनयान परम्परा में हैं। यह दक्षिणी बौद्धमत हैं। इसका प्रचार भी लंका में है। योगाचार और माध्यमिक मत महायान परम्परा में हैं। यह उत्तरी बौद्धमत है। इन चारों दर्शनों का उदय ईसा की आरम्भिक शताब्दियों में हुआ। इसी समय वैदिक परम्परा में षड्दर्शनों का उदय हुआ। इस प्रकार भारतीय परम्परा में दर्शन सम्प्रदायों का आविर्भाव लगभग एक ही साथ हुआ है तथा उनका विकास परस्पर विरोध के द्वारा हुआ है। पश्चिमी दर्शनों की भाँति ये दर्शन पूर्वापर क्रम में उदित नहीं हुए हैं।

वैभाषिक मत बाह्य वस्तुओं की सत्ता तथा स्वलक्षणों के रूप में उनका प्रत्यक्ष मानता है। अत: उसे बाह्य प्रत्यक्षवाद अथवा "सर्वास्तित्ववाद" कहते हैं। सैत्रांतिक मत के अनुसार पदार्थों का प्रत्यक्ष नहीं, अनुमान होता है। अत: उसे बाह्यानुमेयवाद कहते हैं। योगाचार मत के अनुसार बाह्य पदार्थों की सत्ता नहीं। हमे जो कुछ दिखाई देता है वह विज्ञान मात्र है। योगाचार मत विज्ञानवाद कहलाता है। माध्यमिक मत के अनुसार विज्ञान भी सत्य नहीं है। सब कुछ शून्य है। शून्य का अर्थ निरस्वभाव, नि:स्वरूप अथवा अनिर्वचनीय है। शून्यवाद का यह शून्य वेदांत के ब्रह्म के बहुत निकट आ जाता है।

# तेरे नाम....

## गीतू गर्ग

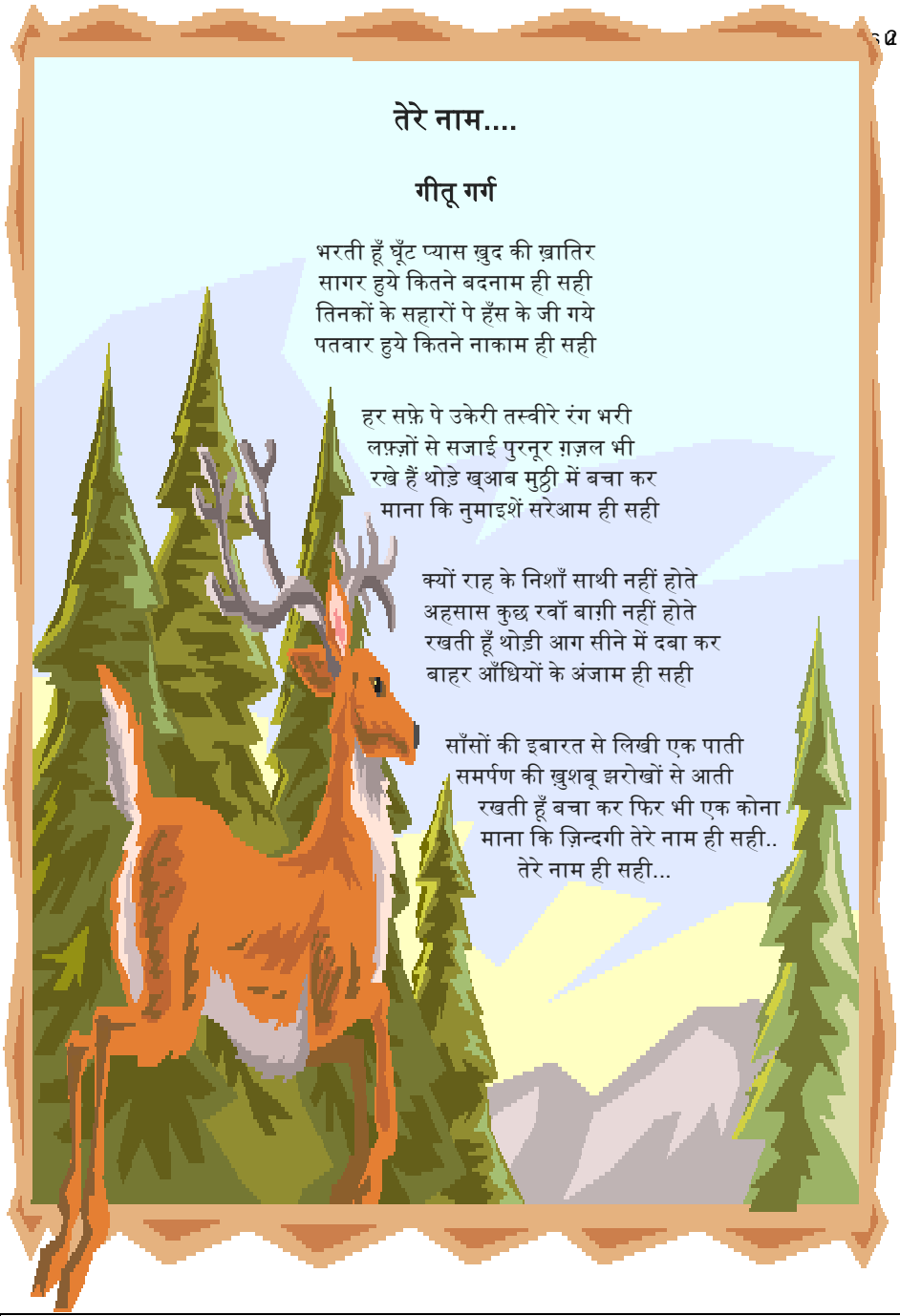

भरती हूँ घूँट प्यास ख़ुद की ख़ातिर
सागर हुये कितने बदनाम ही सही
तिनकों के सहारों पे हँस के जी गये
पतवार हुये कितने नाकाम ही सही

हर सफ़े पे उकेरी तस्वीरे रंग भरी
लफ़्ज़ों से सजाई पुरनूर ग़ज़ल भी
रखे हैं थोड़े ख़्आब मुठ्ठी में बचा कर
माना कि नुमाइशें सरेआम ही सही

क्यों राह के निशाँ साथी नहीं होते
अहसास कुछ रवाँ बाक़ी नहीं होते
रखती हूँ थोड़ी आग सीने में दबा कर
बाहर आँधियों के अंजाम ही सही

साँसों की इबारत से लिखी एक पाती
समर्पण की ख़ुशबू झरोखों से आती
रखती हूँ बचा कर फिर भी एक कोना
माना कि ज़िन्दगी तेरे नाम ही सही..
तेरे नाम ही सही...

# राजस्थान की सन्त परम्परा में जाम्भोजी की सबदवाणी का वैशिष्ट्य

**डॉ. हरीश कुमार**

राजस्थान की भक्ति परम्परा प्रायः निर्गुण, सगुण तथा योग परक तत्वों के समन्वय–समावेशन से संयुक्त रही है। यह तथ्य सम्भवतः विचित्र-सा लगता है कि जहाँ एक ओर लोकचेतना के सामान्य संस्कारों में भक्ति के पारम्परिक पौराणिक पक्ष की बद्धमूलता ने सगुणोपासना को प्रदेश की भक्ति परम्परा में प्रतिष्ठित किया वहीं दूसरी ओर जैन, सिद्ध-नाथ एवं सूफी सम्प्रदाय जैसी इतर परम्पराएँ भी यहाँ साथ-साथ विकसित हुईं। राजस्थान के विभिन्न निर्गुणमार्गी सन्त महात्माओं ने कर्मकाण्ड एवं विभेद रहित मानवीय मूल्यों का प्रतिपादन कर उन्हें जनसामान्य में प्रतिष्ठित किया। सन्तों-भक्तों और योगियों की इस परम्परा ने सदैव सहिष्णुता एवं उदारता की प्रवृत्तियों के अनुकूल ही परस्पर सिखाते हुए सीखने का व्यवहार करते हुए अथवा इस पद्धति को चिन्तन-आचार का मूल-मंत्र बनाते हुए वर्तमान तथा भविष्य हेतु सांमजस्य पूर्ण अधिमान स्थापित किए। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी लिखते हैं - यथा समकालीन जीवन व्यापार के अन्तर्गत समन्वय-सांमजस्य की स्थापना तथा पारम्परिक मान्यताओं के अन्तर्गत सामरस्य-सामंजस्य परकता की उद्भावना। इसी प्रकार विविध धर्मों-सम्प्रदायों-पंथों एवं मत-मतान्तरों की रीति-नीतियों के तादात्म्य तथा सार्वभौम मानवीय आदर्शों में एकरूपता की प्रतिष्ठा।

इसी सन्दर्भ में राजस्थान की प्रमुखतः सांस्कृतिक विशेषता पूर्वाग्रह रहित होकर सद्‌गुणों की ग्रहणशील प्रवृत्ति और आचरण तथा प्रत्येक पंथ-सम्प्रदाय के प्रति श्रद्धापूर्ण दृष्टिकोण की विद्यमानता रही है। इसी परिप्रेक्ष्य में विश्नोई, जसनाथी, निरंजनी, दादूपंथी, लालदासी, चरणदासी एवं रामस्नेही आदि विभिन्न सन्त-सम्प्रदायों के अतिरिक्त पूर्ववर्ती सिद्ध-नाथ तथा लोक-देवता परम्परा के प्रति भी जनमानस का समान रूप से समर्थन संरक्षण और श्रद्धा भाव अभिव्यक्त होता रहा है। साथ ही निर्गुणमार्गी सन्तो एवं सगुण प्रेम-मार्गी भक्तों को बिना किसी भेदभाव के समादृत करते हुए श्रद्धास्पद माना गया है।

राजस्थान की सन्त परम्परा में रामानन्द परम्परा के धन्ना तथा पीपा आदि सन्तों के अनन्तर जाम्भोजी प्रणीत विश्नोई-सम्प्रदाय, जसनाथजी प्रवर्तित जसनाथी-सम्प्रदाय, हरिदास निरंजनी के निरंजनी-सम्प्रदाय, दादूदयाल के दादूसम्प्रदाय, लालदास प्रवर्तित लालदासी-पंथ तथा दरियावजी, हरिरामदासजी, रामचरणजी प्रणीत रामस्नेही सम्प्रदाय इत्यादि को सम्मिलित किया जा सकता है। उपर्युक्त सम्प्रदायों की परम्परा में पूर्वोक्त सन्तों के अतिरिक्त अनेकानेक तेजस्वी सन्त-महापुरूषों की भी विशिष्ट भूमिका रही। यथा-तुलसीदासनिरंजनी, सेवादासनिरंजनी, रज्जब, बखना, गरीबदास, सुन्दरदास बूसर आदि । इस प्रकार राजस्थान की इस परम्परा के सभी सन्त प्रायः निर्गुणोपासक थे, साथ ही शास्त्रीय परम्परा में सुधार के आकांक्षी थे। सर्वविदित है कि कबीर राजस्थान के नहीं थे, परन्तु उनकी शिक्षाओं का राजस्थान पर व्यापक प्रभाव पड़ा। कबीर के समसामयिक-धन्ना, पीपा और परवर्ती दादूदयाल आदि राजस्थानी सन्तों ने उनकी शिक्षाओं से प्रेरणा लेकर उसी प्रकार की शिक्षाओं का यहाँ प्रचार-प्रसार किया। जिस समय राजस्थान में धन्ना, पीपा आदि सन्तों के द्वारा धार्मिक क्षेत्र में एक नई विचारधारा को जन्म दिया जा रहा था, उसी समय यहाँ मुसलमानों के प्रभाव का दौर भी अपनी चरम-सीमा पर

था। अजमेर और नागौर उनके प्रमुख केन्द्र थे। इसी अवधि में यहाँ कई सूफी-सन्त स्थाई रूप से निवास करने लगे थे। जो नागौर और उसके आस-पास के क्षेत्र में इस्लाम का प्रचार कर रहे थे । ऐसी परिस्थिति में उस क्षेत्र के आस-पास कुछ राजस्थानी सन्त भी हुए जो हिन्दू एवं मुस्लिम विचारधारा के बीच सामंजस्य स्थापित करने में प्रयत्नशील थे। उन्होंने हिन्दू एवं इस्लाम में प्रचलित आडम्बरों तथा रूढ़ियों का खण्डन कर धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझने का निर्देश दिया एवं साथ ही, समाज के नैतिक स्तर को ऊपर उठाने के लिए कुछ रचनात्मक सुझाव भी दिये। ऐसे सन्तों में जाम्भोजी का नाम सर्वप्रथम है।

## जाम्भोजी (१४५१ से १५३६ ई.)

विश्नोई सम्प्रदाय के आदि-पुरुष जाम्भोजी का अवतरण भाद्रपद कृष्ण अष्टमी १४५१ ई. को पीपासर (नागौर) के पँवार वंशीय राजपूत लोहटजी तथा हांसा देवी के पुत्र रूप में हुआ था। बाल्यावस्था से ही वे मनन शील और अत्यल्प भाषी थे, परन्तु यदा-कदा इनके मुँह से निकलने वाली बातें लोगों का मस्तिष्क चकरा देती थी। सात वर्ष की अवस्था से गौ-चराने हेतु वन-कान्तार क्षेत्रों में भ्रमण से वहाँ के वातावरण और नीरवता में इन्हें आत्म-चिन्तन हेतु उपयुक्त अवसर प्राप्त हुआ। ध्यान-मनन तथा स्व-विमर्श में निरन्तर तल्लीन होने के कारण उन्होंने आजीवन ब्रह्मचारी रहने का संकल्प लिया।

मान्यता है कि सोलह वर्ष की अवस्था में जाम्भोजी का सद्गुरू से साक्षात्कार हुआ। १४८३ ई. में माता-पिता के निधनोपरान्त गृह त्याग कर समराथल (बीकानेर) में रहते हुए वे सत्संग तथा हरि-चर्चा करने में निमग्न रहने लगे। १४८५ ई. में इसी स्थान पर इन्होंने अपने 'विश्नोई' मत का प्रवर्तन किया। तदुपरान्त यहीं रहकर ज्ञानोपदेश देने लगे। वे अपने सम्पर्क में आने वाले लोगों को 'सबद' तथा भजन सुनाते और शुभकार्य करने की शिक्षा प्रदान करते। संवत् १५९३ (१५३६ ई.) मार्ग शीष कृष्णा ९ को देवलोक गमन के उपरान्त यहीं तालवा गाँव के पास इन्हें समाधिस्थ किया गया। यह स्थान 'मुकाम' कहलाता है।

जाम्भोजी का प्रादुर्भाव ऐसे समय में हुआ जब राजस्थान की दशा बहुत ज्यादा अच्छी नहीं थी। सम्पूर्ण समाज अज्ञान के अंधकार, शोषण के साम्राज्य और आडम्बर युक्त धार्मिक परम्पराओं के जाल में जकड़ा हुआ था। समाज में व्याप्त बुराइयों, दुर्बलताओं और आडम्बरों को देखने-समझने में जाम्भोजी की दृष्टि और बुद्धि बहुत ही पैनी और तीव्र थी। इस कारण वे उन समस्त विसंगतियों पाखण्डों, मिथ्याविश्वासों, बाह्याडम्बरों आदि का गहन-गम्भीर अनुभव कर सत्य का उद्घाटन अपनी 'सबदवाणी' में कर सके। वस्तुतः जाम्भोजी मिथ्याचरणों, आडम्बरों, थोथी परम्पराओं, निरर्थक विश्वासों, मूल्यों आदि पर करारे व्यंग्य करने वाले संत मात्र ही नहीं थे वरन् वे एक ऐसे सशक्त समाज सुधारक भी थे जिनका लक्ष्य अपनी सबद-वाणी के माध्यम से जनसामान्य के जीवनस्तर में सुधार लाना भी था। अतःवे मनुष्य को चेताते हैं -

> ''कांयरे मुरखा तै जन्म गमायो भुंय भारी ले भांरू,
> जा दिन तेरे होम न जाप न तप न क्रिया,
> गुरू न चीन्हों पंथ न पायो अलह गई जमवारू"

हे मूर्ख मनुष्य तूने व्यर्थ में जीवन गँवा दिया, तुमने अपने भार से पृथ्वी के भार को बढ़ाया ही है। जब से तू आया न तूने होम किया न जाप किया न तप आदि क्रियाएँ ही कीं और न ही सद्गुरू को पहचाना, अतः सद्-मार्ग को भी नही पहचान पाया, तेरा मनुष्य जीवन व्यर्थ में ही चला गया। आगे वे कहते हैं-

"माणक पायो फेर लुकायो, नहीं लखायो"

तुझे मानव शरीर रूपी अमूल्य माणिक मिला है, यह पूर्व जन्मों का प्रताप ही है। समय रहते इसको तू समझ नही सका। यह दुनिया तो व्यर्थ के विवाद में रची हुई है। इन्हें हीरे जैसे शरीर का ज्ञान ही नही, यहाँ तर्क-वितर्क के बेकार झमेलों में पड़कर मनुष्य तो क्या अनेक दानव भी नष्ट हो गए।

जाम्भोजी ने अपनी 'सबदवाणी' के माध्यम से समाज को भयमुक्त और आडम्बर रहित बनाते हुए परमात्मा की सरल भक्ति की ओर उन्मुख किया। उनका मानना है कि परमात्मा सर्वत्र और सम्मान रूप से व्याप्त हैं।

"रूप अरू परमूंपिंडे ब्रह्मडे, घट घटअघट रहायों
अनन्त जुगां मैं अमर भणीजूं ना मेरे पिता ना मायों
ना मेरे माया ना छाया रूप न रेखा
बाहर भीतर अगम अलेखा
लेखा अेक निरंजन लेसी, जहाँ चीन्हों तहाँ पायों
अड़सट तीरथ हिरदा भीतर, कोई कोई गुरू मुख बिरला न्हायों।

वह ब्रह्मा 'अगम अलेखा' है। वह 'अल्लाह' है, 'अलेख' है, वह 'अयोनिस्वयंभू' है। वह 'पारब्रह्म है, उसे 'अनन्त' और 'अपार' कहा गया है। वहाँ न छाया है न माया है। वह रूप-रेखा से रहित है। वह त्रिकाल अबाध्य है। जाम्भोजी परमतत्व के सम्बन्ध में कहते हैं कि वह अनिर्वचनीय है, अतः उसे 'ज्योतिस्वरूप' कहा है। वह ज्योतिस्वरूप ब्रह्म समस्त भुवनों में व्यापक है। चतुर्दश भुवनों में सजातीय, विजातीय स्वगत भेद रहित एक अद्वितीय ब्रह्म का ही प्रकाश है। वह बह्म गगन की भाँति सप्त पाताल, तीनों लोक, चौदह भुवन के बाहर-भीतर सर्वत्र व्यापक है। वह आदि-अनादि का रचयिता है। उसका सृजक कोई दूसरा नहीं है। यद्यपि इसके लिए इन्होंने प्रधानतः 'विसन' (विष्णु) शब्द का ही प्रयोग किया है। पर साथ ही इन्होंने यह भी कह दिया है कि उस मेरे सांई के सहस्त्र नाम हैं -

'सहस्त्र नाम सांई भल शंभु म्हे उपना आदि मुरारी'

स्वयं जाम्भोजी ने भी अपनी वाणी में बह्म को अगम, अलख, निरंजन, हरि, करतार, गोरख, गोपाल, राम, रहीम, अल्लाह, कृष्ण, स्वयम्भू आदि अनेक नामों से पुकारा है। परन्तु मूर्तिपूजा का घोर विरोध किया है क्योंकि सर्वव्यापक आत्मतत्व को जब मूर्ति आदि में ही केन्द्रित मानकर दुनिया उसे पूजने में प्रवृत हो जाती है और उस ब्रह्म की सर्वव्यापकता को भुला देती है तब वस्तुतः जड़ द्वारा जड़ का ही पूजन होता है। पत्थर को पूजना गुरू का शिष्य के पैरों पड़ने जैसा है, क्योंकि मूर्ति का निर्माता मनुष्य ही है, तब उसका अपने ही द्वारा निर्मित मूर्ति के सामने नत-मस्तक होना गुरू का शिष्य के पैरों पड़ना ही हुआ। यथा -

"धवका धूजै पाहण पूजै, बे फरमाई खुदाई
गुरू चेलै कै पाअे लागै, देखो! लेग अन्याई

काठी कण जोरू पारैहण, कापड़ माह छिपाई
नीचा पड़ पड़ तानै धोकै, धीरो रे हरिआई"

मध्यकालीन राजस्थान में शिक्षा का प्रचार-प्रसार अधिक नहीं था। अधिकांश लोग अशिक्षित, अनपढ़ और सहज विश्वासी थे। समाज की स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी। धार्मिक अभिचार व अन्धविश्वास समाज में प्रचलित थे। जाम्भोजी ने युग की आवश्यकताओं को समझा तथा सामाजिक हीनता और असमर्थता की भावना को समूल नष्ट कर साधना की ऐसी भूमि तैयार की जो सबके लिए खुली थी। मूर्तिपूजा, तीर्थयात्रा, उपासना के बाह्याचारों एवं कर्मकाण्डों के दिखावे की आलोचना की तथा समाज के समक्ष अन्तःसाधना का मार्ग प्रशस्त किया। जाम्भोजी पांखडी योगियो से कहते हैं - कानों में मुद्रा पहनना, जटायें बढ़ाना और जीव हिंसा करना योग नहीं प्रत्यक्ष पाखण्ड है। केवल मूंड मुंडा लेना, कान फड़ा लेना और 'गोरखहटड़ी' को पूजना योग नहीं है। मूंड मुंडा लिया लेकिन मन को नहीं मूंडा। यथा -

"थे कान चिरावो चिरघट पहरो, आय सांयह पाखंड तो जोग न होई
जटा बधारो जीव संधारो, आय सां यह पाखंड तो जोग न कोई।
जोगी होय के मूड मुंडोवे कान चिरावै, गोरख हटड़ी धौकै ते पण रहया इ वांणी।"

इस प्रकार केवल शारीरिक हठयोगियों को जाम्भोजी वैसे ही लताड़ते हैं जैसे कबीर, नानक आदि ने उन्हें लताड़ा है। यद्यपि योग का आंतरिक रूप उन्हें ग्रहण था तथापि बाह्याडम्बरों के वे घोर विरोधी थे। जाम्भोजी ने जहाँ हिन्दू समाज तथा योगियों के मिथ्या आडम्बरों का विरोध किया वहीं मुसलमानों के ब्राह्याचारों पर भी जमकर प्रहार किया। वे अजान देने वाले मुसलमान से कहते हैं कि यदि तुम्हारा दिल परमात्मा में लगा हुआ है तब तो 'काबे' की 'हज' तुमसे दूर नहीं, फिर यह तुम्हारी 'बाँग' लगाना व्यर्थ है -

दिल साबत हज काबो नेडै, क्या उलबंग पुकारो
सीने सखर करो बंदगी, हक्क नुमाज गुजारो
इंहहेडै हर दिन कीरोजी तोइस हीरो जी सारो
आप खुदाबंद लेखो मांगै, रे बिन ही गुन्हैं जीव क्यों मारो।

जाम्भोजी ने आत्म-परिचय के बिना नमाज पढ़ना भी व्यर्थ बतलाया। वे मुल्लाओं को सम्बोधित कर कहते हैं - रे मुल्ला, मन में ही नमाज गुजारो तुमने संसार को तो देखा है, किन्तु परमात्मा की पहचान नहीं की। केवल चमड़ी के कटने (सुन्नत) से क्या होता है।

जाम्भोजी ने अपने समय में प्रचलित धर्माडम्बरों के खण्डन में कठोरता से उन पर आक्रमण किया है। उन्होंने जिस प्रकार राजस्थान में प्रचलित तत्कालीन विभिन्न धार्मिक व्यर्थतामूलक बातों को आड़े हाथों लिया तथा जिस प्रकार प्रचलित बाह्याडम्बरों और पाखण्डों को अपने व्यंग्य का निशाना बनाया उसे देखकर सहज ही कहा जा सकता है कि उनमें कबीर की-सी फक्कड़ता एवं निर्भीकता देखने को मिलती है।

जाम्भोजी की सबद वाणी तथा उनके द्वारा प्रदत्त २९ नियमों में प्रकृति के विभिन्न घटकों-जल, वर्षा, सूर्य, चन्द्रमा, ऋतुओं का उल्लेख करने के साथ ही वनों की रक्षा एवं वन्य-जीवों की सुरक्षा के सम्बंध में वर्णन मिलता है। वे प्राकृतिक व्यवस्था में अटूट विश्वास करते हैं अतः बैल को बधिया ने कराना तथा अमर 'थाट' बनवाने का

संदेश देते हैं। दुर्व्यसनों से दूर तथा सदा चरण करने पर बल देते हैं। निश्चय ही बिश्नोई-पंथ में भारतीय संस्कृति के मूलभूत मूल्यों की पुनर्प्रतिष्ठा करते हुए जाम्भोजी नें जीव-दया तथा प्रकृति एवं पर्यावरण प्रेम से अनुस्यूत २९ धर्म-नियमों का उपदेश अपने अनुयायियों को दिया। जाम्भोजी भविष्य दृष्टा थे और भविष्य में होने वाले पर्यावरण असन्तुलन के लिए सचेष्ट थे। इसीलिए उन्होनें अपने जीवन काल में मुख्य लक्ष्य के रूप में जीव-दया एवं हरे वृक्षों की सुरक्षा के लिये अनिवार्यता प्रतिपादित करते हुए पर्यावरण संरक्षण के महत्व को बढ़ावा दिया। जाम्भोजी की मान्यता थी कि जीव-जन्तु प्रकृति प्रदत्त अमूल्य निधि हैं। हरे वृक्ष तो प्राणवायु हैं अतः उनका संहार मानव समाज का संहार है। हरे वृक्षों के संहार को उन्होंने हत्या तुल्य अपराध की संज्ञा दी है। इस प्रकार उनके २९ नियम अपने-आप में एक पर्यावरण संरक्षण संहिता हैं।

जाम्भोजी का जीवन, उनकी वाणी, ज्ञान, मुक्ति सभी पर्यावरण संरक्षण को पूर्ण समर्पित हैं।वन सम्पदा एवं वन्य प्राणियों के सामाजिक, आर्थिक महत्व का आंकलन वे इस प्रकार से करते हैं-

जीव न मारो, सिद्धि रहे हैं।
सब जीवन कूँ ईश्वर निहारो।।
लीला रुंख न काटो कोई।
अष्ट सिधि नौ निधि खड़ी रहे घर मांही।।

जाम्भोजी नें जीवन की अनेक प्रकार से व्याख्या की है जिससे लगता है कि वे पर्यावरण सुरक्षा के प्रति किस हद तक सजग थे। वृक्षों, नदियों, शुद्धजल, शुद्ध वायु एवं वनस्पति आदि तत्वों को अपनी वाणी में अत्यधिक महत्व दिया है क्योंकि यही मानव जीवन का आधार हैं। उनकी वाणी में प्रकृति को अचेतन रुप में चित्रित नहीं किया गया बल्कि उन्होंने उसमें अपना जीवन-दर्शन देखा और उसे चेतनता के धरातल पर स्थापित कर दिया।

जाम्भोजी के अनुसार मनुष्य का अस्तित्व ही प्रकृति से निर्मित है, अतः उन्होंने उसी प्रकृति के बीच अपना वास बताया है, वे कहते हैं – हरियाली से आच्छादित कंकेड़ा वृक्ष ही हमारा मंडप और मन्दिर है, जहाँ हमारा निवास है-

"हरी कंकहड़ी मंडप मैंडी, जहाँ हमारा बासा"

जाम्भोजी के हृदय में अहिंसा का महत्व इतना प्रबल होकर जाग्रत हुआ कि उन्होंने चैतन्य जीवरक्षा के अतिरिक्त वनस्पतिछेदन को भी अनुचित एवं पाप कर्म ठहराया है। उन्होंने अपने द्वारा प्रतिपादित २९ धर्म नियमों में "वनस्पतिरक्षा"को एक धर्म-नियम बनाया है -

"हरा वृक्ष नहीं काटना यह सबका मंतव्य।
रक्षा में तत्पर रहो जान यही कर्तव्य।"

जाम्भोजी नें अपनी वाणी में सोमवती अमावस्या तथा रविवार के दिन वनस्पति छेदन का निषेध किया है -

"सोम अमावस अदितबारी, काय काटी बनरायों।"

हरी वनस्पति अथवा वृक्षों को विश्नोई पंथ में स्वर्गादि सुखों का "पोलिया"(पहरेदार) बतलाया है। विश्नोई समाज में खेजड़ी को तुलसी के समान समझते हैं। एक सबद (पद) में जाम्भोजी ने समस्त सृष्टि को 'गुरुकैशरणै" कहा है-

"पवणा पाणी जमीं मेहूँ, भार अठारै परबत रेहूँ।
सूरज जोति परै परै रै, अेती गुरु कै शरणै"

अर्थात - अरे! पवन, पानी, पृथ्वी, बादल, अठ्ठारह भार वनस्पति, स्थिर रहने वाले पर्वत, सूर्य-ज्योति, उससे परे उससे भी आगे, ये जितने भी हैं, ये सब गुरु की शरणागत हैं।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि जाम्भोजी तत्कालीन राजस्थान के न केवल प्रमुख विचारक संत थे, वरन महान सामाजिक एवं धार्मिक सुधारक भी थे। यद्यपि उन्होंने अनेक परम्परागत मान्यताओं का समर्थन किया तथा समाज प्रचलित रुढ़ियों और अन्धविश्वासों पर निर्मम प्रहार करते हुए नवीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन करके समाज के नैतिक और व्यावहारिक दृष्टिकोंण में सुधार करने के भरसक प्रयास किए। विश्व के सभी धर्मा में प्रकृति प्रेम और पर्यावरण संरक्षण की बात कही गई है। परन्तु पर्यावरण के प्रति व्यावहारिक और सहज दृष्टिकोण सर्वप्रथम जाम्भोजी के विचारों में ही मिलता है। उनकी सबदवाणी और २९ नियमों में प्रकृति के विभिन्न घटकों सूर्य, चन्द्रमा, वर्षा, जल ऋतुओं आदि का उल्लेख करते हुए वन्य जीवों और वृक्षों के प्रति अहिंसा की अवधारणा की गई है। जाम्भोजी ने प्रदेश में सर्वप्रथम एक बड़े सैद्धान्तिक-व्यावहारिक आन्दोलन का प्रवर्तन किया जो 'विश्नोई सम्प्रदाय' के रूप में आज भी अपनी परम्परागत तथा सांस्कृतिक विरासत की प्रतिनिष्ठा रखते हुए जीवन्त है।

संदर्भः-


१. उत्तरी भारत की सन्त परम्परा- पं. परशुराम चतुर्वेदी
२. गुरु जम्भेश्वरवाणीः दार्शनिक विश्लेषण - रोहतास कुमार
३. गुरुजम्भेश्वर-विविधआयाम - किशनाराम विश्नोई
४. जम्भसागर - कृष्णानन्दआचार्य
५. जाम्भोजी की वाणी - सूर्यशंकरपारीक
६. जाम्भोजी, विष्णोई सम्प्रदायऔर साहित्य (भाग-1 एवं 2) - डॉ. हीरालाल माहेश्वरी
७. नाथ सम्प्रदाय - हजारीप्रसाद द्विवेदी
८. मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन - डॉ. पेमाराम
९. राजस्थान की भक्ति परम्परा एवं संस्कृति - दिनेशचन्द्र शुक्ल, ओंकार नारायण सिंह
१०. राजस्थान के सन्तऔर उनका साहित्य - ब्रजेन्द्रकुमार सिंहल
११. श्री जम्भसार - स्वामी ईश्वरानन्द गिरी
१२. श्री १०८ श्री जाम्भोजी महाराज का जीवन चरित - महात्मा सुरजनदास
१३. सन्तकाव्य - पं. परशुराम चतुर्वेदी
१४. हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय - डॉ. पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल
१५. हिन्दी की निर्गुण काव्यधाराऔर उसकी पृष्ठभूमि – डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत
१६. विश्नोई सम्प्रदाय और पर्यावरण (एक ऐतिहासिक तथा सामाजिक अध्ययन) - ओम श्रीराठौड़ (शोधग्रन्थ)


सह-आचार्य, हिन्दी-विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जैतारण पाली (राज0)

# डॉ. स्नेह ठाकुर का रचना संसार

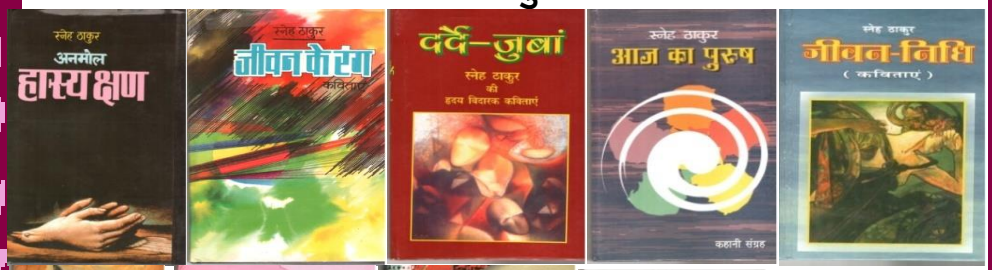


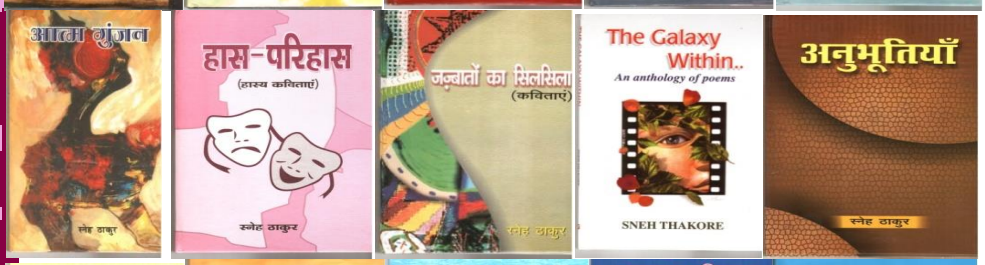

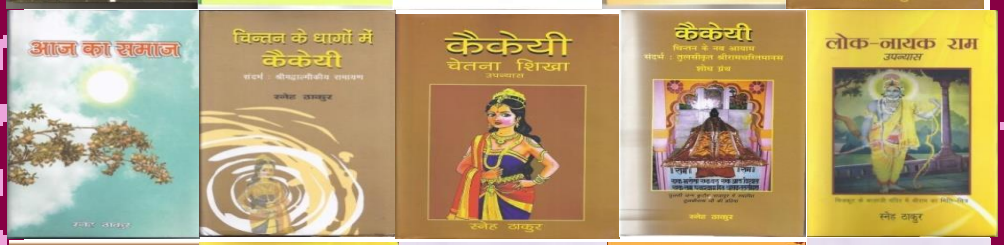


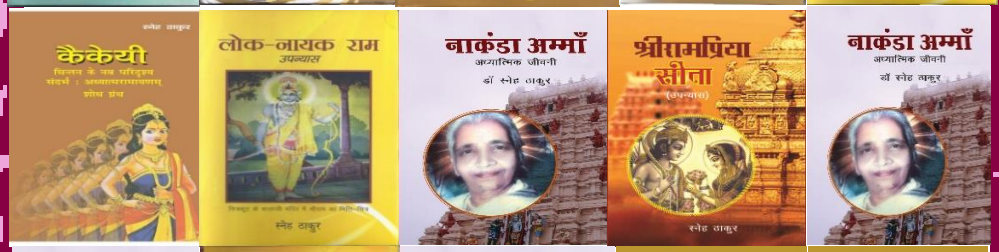


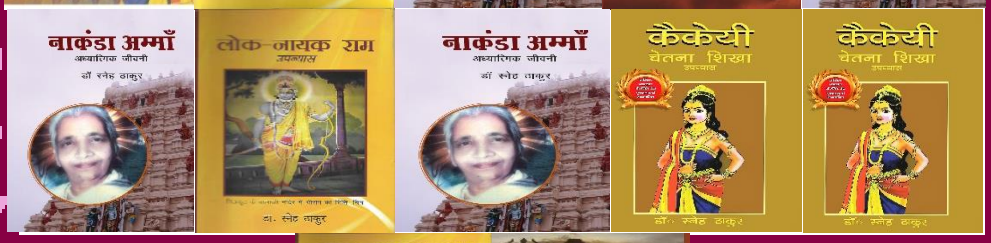

# डॉ. Sna #akur kI p/kaixt puStke

dxann rav` Ü ]pNyas Ý
nakDa AMma> Ü A@yaiTmk jIvnI Ý
&Iramip/ya sIta Ü ]pNyas Ý
lok-nayk ram Ü ]pNyas, iµtIy sSkr` Ý
kEkeyI : icNtn kenv pirdxy - sdwR: A@yaTmramay` Ü xo2-gN4 Ý
lok-nayk ram Ü ]pNyas Ý
kEkeyI : icNtn kenv Aayam - sdwR: tulsI¡t &Iramcirtmans Ü xo2-gN4 Ý
kEkeyI : cetna-ixqa Ü]pNyas, saihTy AkadmI m. p/
Aiql wartIy 'vIrish dev' purSkar sMman, iµtIy sSkr`Ý
icNtn ke2ago. me kEkeyI - sdwR: &ImdVaLmIkIy ramay` Üxo2-gN4Ý
Aaj ka smaj Ü samaijk leq-sgh Ý
kEkeyI : cetna-ixqa Ü]pNyas, ra*¨pit wvn puStkalymesg/htÝ
Anoqa sa4I Ü khanI-sgh Ý
kaVya.jiI Ü kaVy-sgh Ý
kaVy-2ara Ü s.kln, spadn Ov. p/kaxn Ý
]pin8d\ dxR Ü daxRnk Ov. A@yaiTmk Ý
s.jIvnI Ü SvaS$y sMbN2I Aalex Ý
kaVy hIrk Ü s.kln, spadn Ov. p/kaxn Ý
b07ar Ü s.kln, spadn Ov. p/kaxnÝ
pUb-piXcm Ü Aap/vasI sMbiN2t Aalex sgh Ý
kaVy-vi*3 Ü s.kln, spadn Ov. p/kaxn Ý
AnuwUtya> Ü kaVy-sgh Ý
The Galaxy Within ÜA collection of English poemsÝ
jJbato. ka islisla Ü kaVy-sgh Ý
has-pirhas Ü haSy kivtaO>Ý
AaTm-gujn Ü A@yaiTmk-daxRnk gIt Ý
jIvn-ini2 Ü kaVy-sgh Ý
Aaj ka pu+8 Ü khanI-sgh Ý
ddR jbta> Ü nJm v gjl sgh Ý
jIvn kerg Ü kaVy-sgh Ý
AnmoI haSy 9` Ü na3k-sgh, fÐrI gvnRmeN3, kEnEDa µara Ai2ktm
Andan sesMmaintÝ

## p/kaxk v ivtrk

S3ar piBlkex.j_Üpa Ý il _
Ì /Í bI ¸ Aasf AlI roD
n{ idLlI - ÉÉÈÈÈÊ
wart
Star Publishers' Distributors
55, Warren Street
LONDON – W1T 5NW
England
idLlI pus kI sirta v ANy ra*¨Iy Ov. ANtraR¨Iy
pi5kaAo. mewI rcnaO>p/kaixt